संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
ऋषि प्रसाद
हिन्दी
तू एक दृष्टा सर्व का इस दृश्य से है दूरतर।
पहिचान अपने आपको, हो जा अजर ! हो जा अमर !!
पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९

अंक : ७३

९ जनवरी १९९९

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत, नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

इस अंक में

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

लगन यह कैसी लगा रहे हो...

जरा तो इतना बता दो भगवन,
लगन यह कैसी लगा रहे हो।
मुझी में रहकर मुझी से अपनी,
यह खोज कैसी करा रहे हो।
प्राण तुम हो, तुम्हीं हो स्पन्दन,
नैन तुम हो, तुम्हीं हो ज्योति।
निमित्त कारण मुझे बनाकर,
यह नाच कैसा नचा रहे हो।
जरा तो इतना बता दो भगवन,
लगन यह कैसी लगा रहे हो।

- विजय सोनी

२८, ट्रिब्युन कालोनी अम्बाला छावनी (हरियाणा).

*

साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल

जन जन में जगा दी है, दिव्य ज्ञान की मशाल।
साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल ॥
हरि हरि ॐ... हरि हरि ॐ...

तोड़ दी जंजीरें, जाति भेद-भाव की।
जोड़ दी है तार, स्नेह श्रद्धाभाव की।
फूँक दी चिनगारी, सदा नेक राह की।
छलका दिया तूने, सूखा हृदय का ताल ॥
साबरमती के...

सराबोर कर दिया है मन गुरुज्ञान भक्ति से।
अंतर किया उजाला, निज आत्मशक्ति से।
मिटा दिये रंजो अलम, समता सुमति से।
है दूर नहीं मंजिल, मुक्ति की अब विशाल ॥
साबरमती के...

रहमत भरी नजर से पावन ये मन किया।
हरि ॐ शिवोऽहं से, हरिनाम धन दिया।
ज्योति जगा के ज्ञान की, अज्ञान हर लिया।
झूम उठा मनवाँ, बरसी करुणा बेमिसाल ॥
साबरमती के...

अंतर में आत्मदर्शन की, आस जगा दी।
प्रभुप्रीति भक्तिरस की, प्यास जगा दी।
मझधार में थी नैया भव पार लगा दी।
लहराया सुख का सागर, हुआ मैं खुशहाल ॥
साबरमती के...

छाया नशा निराला प्रभु के नाम का।
डूबा है बेखुदी में, हुआ जो राम का।
छलका दिया है जामे रस, स्वरूप ध्यान का।
हर दिल में रम रहा है, दीनों का वह दयाल ॥
साबरमती के...

गाफिल जो सो रहे हैं, उनको जगा रहे।
जीवभाव का यह पर्दा, मन से हटा रहे।
ब्रह्मज्ञान की यह दौलत, भर भर लुटा रहे।
मिट गई कंगालियत, हुआ हूँ मालामाल ॥
साबरमती के...

सजी है रंगे महफिल परमात्मध्यान की।
दिल में जगा दी शमां, अलख के नाम की।
फकीरी मस्ती छाई इबादत के जाम की।
सद्गुरु चरणरज से, 'साक्षी' हुआ निहाल ॥
साबरमती के...

*

देवाधिदेव आत्मदेव

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

इस मायावी जगत में लोग तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं को मानते हैं। इनमें तीन देव मुख्य हैं : ब्रह्मा, विष्णु और महेश। ब्रह्माजी जगत की उत्पत्ति करनेवाले अधिष्ठाता देव हैं, श्री विष्णु पालन करनेवाले अधिष्ठाता देव हैं और श्री महेश (रुद्र) संहार करनेवाले देव हैं। इन देवों में से ब्रह्माजी को जगत में अवतार धारण करने की जरूरत नहीं पड़ती। शिवजी के भी इतने अवतार नहीं हैं जितने विष्णुजी के हैं। भगवान विष्णु बार-बार अवतार लेकर इस जगत में आते हैं।

जैसे, कुटुम्ब में माता बच्चों के पालन-पोषण, पढ़ाई तथा घर की व्यवस्था आदि संभालती है तो पिता की अपेक्षा माता की जिम्मेदारी अधिक हो जाती है। माँ बच्चों का पूरा ख्याल रखती है कि बच्चों ने खाया है कि नहीं खाया ? खाया तो क्या खाया ? कितना खाया ? वे क्या करते हैं - क्या नहीं करते हैं ? क्योंकि बच्चों का पालन करने की जिम्मेदारी उसकी है।

वैसे ही विष्णुजी जगत के पालनकर्त्ता देव हैं इसलिए जगत को पालने-पोसने का, उसकी व्यवस्था का ख्याल रखते हैं और जब जरूरत पड़ती है तब वे अवतार धारण करते हैं।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

'साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए और दूषित कर्म करनेवालों का नाश करने के लिए एवं धर्म की स्थापना करने के लिए युग-युग में मैं प्रगट होता हूँ।' **(श्रीमद् भगवद्गीता : ४.८)**

पूर्णता को पाये हुए साधु तो शूली पर चढ़ते हुए भी कहते हैं कि : ''मेरी कभी मौत नहीं होती... मैं इस शरीर के पहले भी था, अब भी हूँ और बाद में भी रहूँगा।'' वे अपने आत्मदेव को पा चुके होते हैं। लेकिन साधक जब अभक्त और असाधु के संपर्क में आकर अपने लक्ष्य को भूल जाये, समाज के लोग नाराज न हों उसकी फिक्र करके, समाज के लोग राजी रहें ऐसा वेश पहनने लगे, ऐसा-वैसा खाने लगे, न बोलने जैसा बोलने लगे और अपने आत्मदेव की अवहेलना करने लगे, तब दुष्कर्मियों का जोर बढ़ता है। जब साधु स्वभाव के लोग सिकुड़ने लगते हैं और दुष्कर्मियों का प्रभाव बढ़ने लगता है, तब भगवान साकार रूप लेकर प्रगट होते हैं।

'जगत में उत्पत्ति, स्थिति और लय होते रहते हैं और उनके अधिष्ठाता देव यह कार्य संभालते हैं...' यह सब माया के अन्तर्गत कहा जाता है। तात्त्विक दृष्टि से वास्तव में न ब्रह्माजी सृष्टि की रचना करते हैं, न विष्णुजी पालन करते हैं, न रुद्र संहार करते हैं। जैसे रात्रि के स्वप्न में आप अपने जाग्रत की अवस्था को भूल जाते हो और स्वप्न की सृष्टि में कुछ-का-कुछ बना लेते हो। स्वप्न-सृष्टि में कुछ भी, कितना भी हो जाये, फिर भी जाग्रत होकर देखो तो कुछ नहीं होता है। ऐसे ही माया में अपने स्वरूप के अज्ञान के कारण जगत की उत्पत्ति, स्थिति, लय सब दिख रहा है, परन्तु वास्तव में देखो तो शुद्ध ब्रह्म में जगत का आरोप किया जाता है। हम निष्प्रपंच में

प्रपंचबुद्धि, निष्कलंक में कलंकबुद्धि करते हैं क्योंकि कलंकित देह को 'मैं' मानते हैं। अभी तक हमने अपने आत्मदेव को जाना नहीं है, आत्मा-परमात्मा की एकता का अनुभव किया नहीं है इसलिए वास्तव में कुछ नहीं होते हुए भी सब दिख रहा है।

निराकार सत्ता ज्यों-की-त्यों स्थित है। लेकिन जो व्यक्ति भावप्रधान हैं वे उस पूर्ण स्वरूप को, निराकार को नहीं समझ पाते हैं। वे कहते हैं कि : 'निराकार भगवान की कोई आकृति नहीं है तो हम पूजा किसकी करें ? उनका मुँह नहीं है तो दर्शन कैसे करें ? उनके कान नहीं हैं तो हम प्रार्थना किसे सुनाएँ ? उनके पैर नहीं हैं तो हम चरण कैसे छुएँ, झुककर प्रणाम किसको करें ?'- ऐसे भक्त लोगों ने अपनी श्रद्धा के बल से प्रार्थनाएँ करके उस निराकार परमात्मा को साकार रूप में अवतरित करवाया। भगवान अपनी इच्छा से अवतार लेना नहीं चाहते लेकिन भक्तों के मन का यह भाव होता है कि निराकार में हमारी गति नहीं होती है तो निराकार ब्रह्म साकार रूप लेकर अठखेलियाँ करे तो आनंद मिलेगा।

मैंने सुना है कि एक बार हजरत मूसा कोयतूर पर्वत पर जा रहे थे। वहाँ उन्होंने देखा कि एक गड़रिया बैठकर प्रार्थना किये जा रहा है : ''हे अल्लाह ! तेरे दर्शन की बड़ी इच्छा है। तू प्रगट होकर दर्शन दे। मेरे मालिक ! तू आ जा। तुझे भूख लगी होगी। मैं तुझे बाजरे की रोटी खिला दूँ और अपनी बकरियों को दुहकर तुझे ताजा दूध पिला दूँ। तेरी दाढ़ी में कंघी लगा दूँ। तेरे बालों में से जूएँ निकाल दूँ। बस, तू एक बार आ जा।''

गड़रिया प्रार्थना किये जा रहा था। उसको मालिक के तत्त्व का तो पता नहीं था। तत्त्व का पता न होने पर भी यदि आप प्रार्थना करते हो, सच्चे दिल से पुकारते हो तो वही तत्त्व किसी भी रूप में आपकी इच्छा पूर्ण कर दे- यह संभव है।

हजरत मूसा ने गड़रिये की सब बातें सुनीं और उसे डाँटा : ''अरे मूर्ख ! खुदा को कभी दाढ़ी होती है क्या ? खुदा को भूख लगती है क्या ? खुदा क्या बाजरे की रोटी खायेगा और तेरी बकरियों का दूध पियेगा ? खुदा को तेरी कंघी की जरूरत है ? बदतमीज कहीं का !''

गड़रिया घबराया और बोला : ''मूसा साहब ! मुझे क्षमा कीजिए। अब खुदा कैसा है, आप ही बताइए और आदेश दीजिए। जैसा आप कहेंगे वैसे ही मैं खुदा को पुकारूँगा, लेकिन पुकारूँगा जरूर।''

मूसा बोले : ''खुदा को दाढ़ी नहीं होती है।''

''ठीक है।''

''खुदा को बाल नहीं होते हैं।''

''ठीक है।''

खुदा शरीरधारी नहीं होता है।''

गड़रिया : ''अच्छा ! तो फिर वह कैसा होता है ?''

मूसा : ''खुदा कैसा होता है, यह मैं नहीं कह सकता। खुदा लाबयान है। उसका बयान नहीं हो सकता।''

गड़रिये की समझ में कुछ नहीं आया। अब उसको करने के लिए कुछ बचा ही नहीं। वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया।

हजरत मूसा वहाँ से आगे चले जा रहे थे, तब उन्होंने आकाशवाणी सुनी : ''ऐ मूसा ! मैंने तुझे जहाँ में किसलिए भेजा था ?''

मूसा : ''मालिक ! आपका पैगाम, आपका फरमान लोगों तक पहुँचाने के लिए।''

आकाशवाणी : ''मैंने तुझे किसीकी श्रद्धा तोड़ने के लिए नहीं भेजा था। अब तू ही बता, मैं कैसा हूँ ?''

मूसा : ''मेरे मालिक ! आप कैसे हैं, वह तो मैं नहीं बता सकता।''

आकाशवाणी : ''तू नहीं बता सकता तो

उस गडरिये को क्यों रोका ? वह जैसा भी मुझे मानता था, उसके लिए सही था । क्या मैं दाढ़ीवाला होकर नहीं प्रगट हो सकता हूँ ? क्या मैं बाजरे की रोटी खाने के लिए नहीं आ सकता हूँ ? मेरे लिए क्या असंभव है ? जा, उस गड़रिये से क्षमा माँग ।''

मूसा गये उस गड़रिये के पास और बोले :

''भाई ! मुझे क्षमा करना । मैंने तुझे मालिक की प्रार्थना करने से रोका था । मेरी भूल हो गयी है । सचमुच खुदा को भूख लगी है । तू पुकार, वे आ जायेंगे । खुदा को बकरियों का दूध भी अच्छा लगता है । उनके बालों में जुएँ पड़ गयी हैं । उन्हें तू अच्छी तरह निकाल सकता है । उनकी दाढ़ी में कंघी भी लगा सकता है ।''

उसके विश्वास को मूसा ने सम्मति दे दी और वह गड़रिया फिर से अपने मालिक को पुकारने में लग गया ।

जिनका हृदय भावप्रधान है, तत्त्वप्रधान नहीं है ऐसे व्यक्तियों के लिए अनादि, अनंत ब्रह्म साकार होकर अठखेलियाँ कर लेता है ।

भक्तिमार्गवाले लोग बोलते हैं कि भगवान हमारे सर्वस्व हैं । जो भावप्रधान हैं वे माया को नहीं छोड़ सकते, भोगों को नहीं छोड़ सकते, एकांत में नहीं रह सकते । वे तो भगवान को माया के साथ स्वीकार करते हैं । इसलिए भगवान विष्णु मायासहित दिखते हैं– लक्ष्मीनारायण के रूप में, राधाकृष्ण के रूप में या सीताराम के रूप में । माया भगवान के पास में ही होगी । परन्तु जो शैवपंथी हैं अथवा तत्त्व का विचार करते हैं, वे माया को मिथ्या समझते हैं । शिवजी के मंदिर में देखोगे तो शिवजी अलग और पार्वतीजी अलग दिखेंगी, माया अलग दिखेगी ।

जब तक आत्म-साक्षात्कार नहीं होता है, तब तक माया अलग भासती है, ब्रह्म अलग भासता है और हम अपने को कुछ अलग मानते हैं । किन्तु ज्यों-ज्यों हम तत्त्वविचार में डूबते जाते हैं, आत्मदेव में गोता मारते जाते हैं, त्यों-त्यों अलगाव दूर होता जाता है । जब अलगाव दूर होता जाता है तो बिखरना भी कम होने लगता है और अंततः चेतना का पूर्ण विकास होता है । फिर उस आत्मदेव से अपनी एकता का अनुभव होता है और आत्म-साक्षात्कार हो जाता है ।

जिनको आत्म-साक्षात्कार होता है, उनको तो माया भी ब्रह्मरूप भासती है । जब माया ब्रह्मरूप भासती है, तो उनका सारा व्यवहार ब्रह्मरूप हो जाता है । ऐसे साक्षात्कारी महापुरुष न तो करोड़ों की संख्या में मिलेंगे, न लाखों मिलेंगे, न हजारों मिलेंगे, न सैकड़ों मिलेंगे, न दर्जनों मिलेंगे । कभी-कभी, कहीं-कहीं, कोई-कोई विरला होता है जो आत्मा-परमात्मा की एकता का अनुभव किया हुआ होता है । ऐसे आत्म-साक्षात्कारी महापुरुषों के दर्शनमात्र से देवता लोग भी अपना भाग्य बना लेते हैं, साधारण मनुष्य की तो बात ही क्या ?

ऐसा महिमावान् वह आत्मदेव है ।

*

निरन्तर प्रयास करते रहो । किसी भी परिस्थिति में हारकर मत बैठो । परमात्मा-रूपी समुद्र में निरन्तर गोता लगाते रहो । एक दिन रत्न आपके हाथ में अवश्य आ ही जायेगा ।

**आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः । सत्त्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः ।
स्मृतिर्लब्धे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः ।**

- छांदोग्य उपनिषद् : ७.२६.२

भोजन की शुद्धि से चित्त की शुद्धि और चित्त की शुद्धि से प्रज्ञा की प्राप्ति तथा प्रज्ञा से सारे बंधनों का क्षय होता है ।

सच्ची शांति

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।।

''मेरा भक्त मुझे तत्त्व से यज्ञ और तपों का भोगनेवाला और संपूर्ण लोकों के ईश्वरों का भी ईश्वर तथा संपूर्ण भूत-प्राणियों का सुहृद यानी स्वार्थरहित प्रेमी जानकर शांति को प्राप्त होता है ।' (गीता : ५.२९)

दुनियाँ में आज तक जितने भी महापुरुष हो गये, उन महापुरुषों में सत्यसंकल्प का सामर्थ्य भगवद्सत्ता से ही उत्पन्न हुआ है । विद्वानों, दयालुओं, प्रेमियों, सज्जनों, सुहृदों एवं परदुःखकातरता के सद्गुण से संपन्न हृदयों में जो भी प्रेरणा एवं साहस, सामर्थ्य एवं धैर्य, नम्रता एवं निखालसता, सहिष्णुता एवं उदारता, प्रभु-प्रेम एवं भ्रातृभाव तथा योगसामर्थ्य एवं ऋद्धि-सिद्धियों की शक्ति आती है, वह सब उस अद्भुत भण्डार परमात्मा से ही आती है । फिर भी उस अद्भुत भण्डार में तृण जितनी भी कमी नहीं होती ।

जिस प्रकार धरती के तमाम वृक्ष, लताएँ, फल एवं फूल अपनी खुराक धरती से ही लेते आये हैं, महकते आये हैं एवं उसीमें मिटते भी गये हैं लेकिन धरती की देने की शक्ति नहीं मिटी । संभव है कि धरती की शक्ति कुछ क्षीण हुई हो परन्तु धरणीधर की शक्ति में एक तृण जितनी भी कमी नहीं होती । उस सच्चिदानंद परमात्मा को हम नमन करते हैं । **नमः** अर्थात् **न मम** - मेरा नहीं है... यह शरीर पाँच भूतों का है, मेरा नहीं है । ये वस्तुएँ प्रकृति की हैं, मेरी नहीं हैं । केवल एक परमात्मा ही मेरा है और मैं उसका हूँ - यह बात अगर दृढ़ता से समझ में आ जाये तो मनुष्य को शांति की प्राप्ति हो जाती है ।

पिता की सेवा की, माता की सेवा की, जनता-जनार्दन की सेवा की और उन सबकी गहराई में सब सेवाओं के फल को भोगनेवाला इष्टदेव परमात्मा ही है - ऐसा माना तो भी शांति स्वाभाविक ही प्राप्त होती है ।

परमेश्वर प्राणिमात्र का परम सुहृद है । चाहे जो भी घटना घटे, उस घटना के पीछे जगन्नियंता की करुणा एवं कृपा ही कार्य करती है - ऐसा माननेवाले सज्जनों को भगवद्शांति सहज ही में मिलती है ।

अशान्तस्य कुतः सुखम् । अशांत को सुख कहाँ ? सुख-सुविधा के साधन उसे मिल सकते हैं, परंतु अंतरात्मा का सुख नहीं मिल सकता । शांति तो केवल ईश्वर के आश्रित अंतःकरण को ही मिल सकती है ।

भगवान कहते हैं :

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।

लोक-लोक के अपने-अपने ईश्वर होते हैं, लोकपाल होते हैं । उन लोकपालों के भीतर जो बैठा है वह लोकेश्वर, सर्वलोकमहेश्वर है । फिर चाहे सामने गरीब मिले, चाहे अमीर मिले, चाहे यमराज, शिवजी या विष्णुजी मिल जायें... 'उन सबमें सर्वलोकमहेश्वर मैं ही हूँ' ऐसा समझकर जो उनकी सेवा करता है, भगवान कहते हैं कि वह मुझसे दूर नहीं और मैं उससे दूर नहीं । ऐसा पुरुष तत्क्षण शांति को प्राप्त होता है ।

'बेटा आज्ञाकारी है' - यह सोचकर खुशी

होती है तो ठीक है, लेकिन गर्व न करो कि 'मेरा बेटा आज्ञाकारी है, अतः मैं बड़ा खुशनसीब हूँ।' इसके बजाय यह सोचो कि बेटे के रूप में उस सर्वेश्वर ने ही मेरा संतोष बढ़ाया है।

'बेटा आज्ञा नहीं मानता, आज्ञा का उल्लंघन करता है। मैं कह-कहकर थक गया किन्तु मेरी एक नहीं सुनता, ऐसा कमीना बेटा है।' नहीं नहीं, उसको भी धन्यवाद दो कि वह आपको अनासक्तयोग सिखाता है। हमारी आसक्ति तोड़ने के लिए यह भी लोकेश्वर की ही व्यवस्था है।

बेटा अनुकूल है तो उसे धन्यवाद दो कि 'मेरा विषाद दूर करने के लिए बेटे के द्वारा वह (परमात्मा) अनुकूल चेष्टा करता है।' बेटा प्रतिकूल चलता है तो उसे धन्यवाद दो कि 'मेरी आसक्ति मिटाने के लिए परमात्मा ने ऐसी व्यवस्था की है।' ऐसा करने से आपके मन में अशांति नहीं रहेगी, बल्कि धन्यवाद उभरेगा।

चार प्रकार के पुत्र होते हैं :

(१) पिछले जन्म का लेनदार आपका पुत्र होकर आ सकता है, आता है। उसे पढ़ाया-लिखाया, बड़ा किया, शादी की, लेन-देन पूरा हुआ और वह चल बसता है।

(२) पिछले जन्म का वैरी भी आपका पुत्र होकर आता है जो कदम-कदम पर आपको चोट पहुँचाता है।

(३) तीसरा पुत्र होता है उदासीन अर्थात् न वैरी, न मित्र। परंपरा में जैसे जन्म होता है, वैसे ही वह आता है। ऐसा पुत्र न तो सुख देता है और न ही दुःख देता है।

(४) चौथा पुत्र होता है सेवक। पिछले जन्म में आपने किसीकी सेवा की और वही आपका पुत्र होकर आ जाता है। ऐसा पुत्र सेवक होकर सुख देता है।

इस प्रकार किसीके यहाँ सेवक होकर, किसीके यहाँ वैरी होकर, किसीके यहाँ लेनदार होकर तो किसीके यहाँ उदासीन होकर पुत्र आता है। अतः आप न अपने को भाग्यशाली मानो और न अभागा मानो, वरन् इन चीजों से निर्लिप्त रहकर अपने परम सुहृद लोकेश्वर पर ही नज़र रखो। वह प्राणिमात्र का परम सुहृद है।

आप कर्म करने में सावधान रहो। ऐसे कर्म न करो जो आपको बाँधकर नरकों में ले जायें। लेकिन अभी जो पूर्व कर्मों का फल मिल रहा है, उसमें आप प्रसन्न रहो। चाहे मीठे फल मिलें, चाहे खट्टे या कड़वे मिलें, प्रसन्नता से उन्हें बीतने दो। यदि मीठे फलों से चिपकोगे तो आसक्ति हो जायेगी और खट्टे या कड़वे फलों से संघर्ष किया तो खटास या कड़वापन बढ़ जायेगा। अतः सबको बीतने दो।

जो बीत गयी सो बीत गयी,
तकदीर का शिकवा कौन करे ?
जो तीर कमान से निकल गयी,
उस तीर का पीछा कौन करे ?

जो कर्म पहले किये हैं, उनका फल मिल रहा है तो उन्हें बीतने दो। उनमें सत्यबुद्धि न करो। जैसे, गंगा का पानी निरंतर बह रहा है, वैसे ही सारी परिस्थितियाँ बहती चली जा रही हैं। जो सदा-सर्वदा रहता है, उस परमात्मा में प्रीति करो और जो बह रहा है, उसका उपयोग करो। जो यज्ञ एवं तपों के भोक्ता हैं, संपूर्ण लोकों के ईश्वरों के भी ईश्वर हैं एवं संपूर्ण भूत-प्राणियों के सुहृद हैं- ऐसे परमात्मा से प्रीति करो तो परम शांति को पाना आसान हो जायेगा।

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

सृष्टि कबसे ?

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कर्मों के फलस्वरूप यह देह बनती है और फिर देह से कर्म होते हैं, तो कर्म पहले कि देह पहले ? मुर्गी से अण्डा आया और अण्डे से मुर्गी आयी तो मुर्गी पहले कि अण्डा पहले ? बीज से वृक्ष हुआ और वृक्ष से बीज आया तो बीज पहले या वृक्ष पहले ? ऐसा प्रश्न कई लोगों के मन में हो सकता है कि जब सृष्टि की उत्पत्ति हुई होगी तब सबसे पहले शरीर तो नहीं था, फिर कर्म कैसे बने और कर्म नहीं थे तो शरीर कैसे बना ?

इसको बोलते हैं माया की अनिर्वचनीयता। **अघटनघटनापटीयसी यस्य सा माया।**

अकबर ने संत दादू दीनदयाल का नाम सुना था। एक बार अकबर ने उनके पास अपने एक आदमी को भेजकर कहलवाया : ''मैं सत्संग के लिए आना चाहता हूँ।''

दादू दीनदयाल ने कहा : ''आप वहीं तशरीफ फरमाइए। आप आयेंगे तो आपके साथ आपका झमेला आयेगा और मेरे आश्रम में राजसी-तामसी वातावरण फैलेगा।''

अकबर ने दुबारा संदेश भेजा : ''तो फिर आप ही चले आइये।''

दादू दीनदयाल ने कहलवाया : ''आपको उपदेश लेना है, ज्ञान लेना है तो मैं घर बैठे दूँगा। आपकी खुशामद करके दूँगा तो आपकी असलियत दब जायेगी। इसलिए मैं वहाँ नहीं आ सकता।''

कैसे रहे होंगे भारत के वे संत !

बाद में आगरा और राजस्थान के बीच फतेहपुर सीकरी के पास सत्संग की व्यवस्था की गयी। फिर संत दादू दीनदयाल की सहमति ली गयी कि 'वहाँ संतश्री पधारें और हम भी श्रीचरणों में हाजिर हो जायेंगे।' उसके अनुसार निर्धारित समय से सत्संग का कार्यक्रम शुरू हुआ। अकबर ने प्रार्थनापूर्वक प्रश्न रखे एवं उनके जवाब में सत्संग चला।

एक दिन अकबर बचकानी कर बैठा और कहा :

''महाराज ! खुदाताला ने दुनियाँ बनायी तो पहले धरती बनी कि जल बना ? आकाश बना कि वायु बना, कि तेज बना ?''

दादू दीनदयाल थोड़े रुष्ट होकर बोले : ''यह कैसा मूर्खों जैसा सवाल पूछते हो ? क्या अपने नियम ईश्वर पर लागू करते हो ? यह तो मनुष्य है कि एक काम करके दूसरा काम करे। एक विभाग का एक बड़ा और दूसरे विभाग का दूसरा बड़ा लेकिन जिससे सारे विभाग चल रहे हैं, जो सबमें बैठा है उसके लिए यह नियम लागू नहीं होता कि पहले जल बनाया या पृथ्वी या आकाश या वायु।

आप स्वप्न में जो कुछ बनाते हो, उसमें पहले क्या बनाते हो, इसका आपको ही पता नहीं। अपने स्वप्न की लीला से आप इतना सारा बना लेते हो तो परमात्मा अपनी माया से कब कितना बना ले, कहना मुश्किल है। वह अनिर्वचनीय है।''

सृष्टि अनादि काल से है। पहले क्या बना - इस चक्कर में मत पड़ो। कुछ लोग कल्पना करते हैं कि 'ईसा के २००० वर्ष पूर्व अमुक दिन सुबह नौ बजे सृष्टि की रचना हुई।' तो उनसे पूछना चाहिए कि नौ बजानेवाली घड़ी पहले बनी थी कि सृष्टि पहले बनी थी ?

कुछ लोग कहते हैं कि नौ हजार वर्ष से सृष्टि बनी तो कोई बोलते हैं कि मोहन-जो-दड़ो के पहले बनी। कुछ अन्य लोग बोलते हैं कि १८,००० वर्ष पहले सृष्टि बनी। लेकिन 'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' एवं अन्य शास्त्रों में आता है कि ४,३२,००० वर्ष का कलियुग, उससे दुगुना ८,६४,००० वर्ष का द्वापर, उससे तिगुना १२,९६,००० वर्ष का त्रेता एवं उससे चौगुना १७,२८,००० का सतयुग होता है। कुल ४३,२०,००० वर्ष बीतने पर एक चतुर्युगी होती है। ऐसी ७१ चतुर्युगियाँ बीतने पर एक मन्वन्तर होता है और ऐसे १४ मन्वन्तर बीतते हैं तब एक कल्प होता है। एक कल्प बराबर होता है ब्रह्माजी का एक दिन और वे ब्रह्माजी अब ५० वर्ष पूरे करके ५१वें वर्ष के प्रथम दिन के दुपहरी के समय में हैं। अभी सातवाँ मन्वन्तर चल रहा है, २८वीं चतुर्युगी चल रही है और कलियुग का प्रथम चरण चल रहा है। कलियुग के ५२२० वर्ष हो चुके हैं।

ब्रह्माजी का एक दिन हमारी हजार चतुर्युगियाँ बिता देता है। ऐसे ब्रह्माजी भी कितने ही हो गये।

श्री वशिष्ठजी महाराज कहते हैं :

''हे रामजी ! धूलि के कण गिन सकते हो, गंगा के बालू के कण गिन सकते हो लेकिन ब्रह्माजी कितने हुए- यह नहीं गिन सकते। सृष्टि अनादि काल से, सनातन काल से चली आ रही है।''

कुछ लोग कहते हैं कि ब्रह्माजी ने पुष्कर में बैठकर ही सृष्टि की। वहाँ उनका मंदिर भी है। इसका अर्थ क्या है ? पुष्कर पहले बना, बाद में ब्रह्माजी वहाँ आये और सृष्टि बनायी ?

कुछ लोग कहते हैं कि हम भगवान को तब मानेंगे जब भगवान हमारे सामने सृष्टि की उत्पत्ति करें, हमारे सामने पालन करें और हमारे सामने संहार करें। यदि आपके सामने सृष्टि की उत्पत्ति करें तो आप पहले होगे कि बाद में बनोगे ? आपके सामने पालन करें तो आप तो सर्वव्यापक हो नहीं। आप यहाँ हो और भगवान आपसे १००० मील दूर की चीजों का पालन आपके सामने कैसे करेंगे ? भगवान यदि आपके सामने सृष्टि का संहार करें तो आपको छोड़कर संहार करें लेकिन यह पूरी सृष्टि का संहार नहीं हुआ और आपसहित सृष्टि का संहार कर दिया तो आप यह संहार देखोगे कैसे ?

इसलिए शास्त्र एवं अनुभवी महापुरुषों के वचनों के अनुसार यात्रा करो तो आपको पता चल जायेगा कि वह परमात्मा बिल्कुल सहज, सरल एवं एकदम अपना-आपा होकर बैठा है। उसको पाना अत्यंत सरल है।

वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : ''हे रामजी ! फूल, पत्ते और टहनियाँ मसलने में परिश्रम है लेकिन अपने परमेश्वर को जानने में क्या परिश्रम ?''

...और इतना कठिन भी है कि :

जनम-जनम मुनि जतन कराहीं ।
अंत राम कछु आवत नाहीं ॥

कल्पना करो कि शक्कर का एक बड़ा पर्वत है और एक चींटी उस पहाड़ को जाँचने चल पड़े तो चलते-चलते चींटियों की कई पीढ़ियाँ पूरी हो जायें तब भी पहाड़ की पूरी जाँच नहीं कर सकतीं, शक्कर के पहाड़ को ठीक से नहीं जान सकतीं। लेकिन जहाँ चींटी है, वहीं जरा-सा शक्कर का अनुभव कर ले तो उसके लिए पहाड़ को जानना आसान है। ऐसे ही जहाँ आप हो, वहीं थोड़ा गोता मारो तो विश्वनियंता को जानना आसान हो जायेगा।

मान लो, किसीके बढ़िया कपड़ों पर दाग लग गया। अब वह दिन भर जिस-जिसके यहाँ गया था उस-उसके वहाँ जाकर पूछे कि 'तुम्हारे यहाँ दाग लगा कि उसके यहाँ लगा ?' दाग कहाँ लगा और कब लगा, इसके चक्कर में पड़ने से क्या लाभ ? इस चक्कर को छोड़े और दाग को धो डाले तो काम पूरा हो जाये। ऐसे ही सृष्टि कबसे चली, इसका सही पता चले तो संतुष्ट हो जाओ

और पता नहीं चले तो कोई बात नहीं। आप अपना काम बना लो।

मुर्गी पहले कि अण्डा पहले ? न मुर्गी पहले न अण्डा पहले। देखनेवाला पहले, दृष्टा पहले।

स्वप्न में कभी-कभी आप अपने को बेटा पाते हैं और कभी-कभी अपने को केवल पिता पाते हैं। लेकिन जिससे बेटा दिखता है या पिता दिखता है वह सबसे पहले होता है और ये सब चले जाते हैं, उसके बाद भी वही रहता है। स्वप्न से पहले भी आप थे और स्वप्न देखा तब भी आप थे और स्वप्न चला गया तब भी आप रहे। आप जो हैं उसे खोज लो तो सृष्टि का रहस्य अपने-आप प्रगट हो जायेगा।

पूज्यश्री की अमृतवाणी पर आधारित
आडियो-विडियो कैसेट, कॉम्पेक्ट डिस्क व सत्साहित्य
रजिस्टर्ड पोस्ट पार्सल से मँगवाने हेतु

(१) ये वस्तुएँ रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा भेजी जाती हैं।
(२) इनका पूरा मूल्य अग्रिम डी. डी. अथवा मनीऑर्डर से भेजना आवश्यक है।

(A) कैसेट व कॉम्पेक्ट डिस्क का मूल्य इस प्रकार है :

10 आडियो कैसेट	:	मात्र	Rs. 232/-
3 विडियो कैसेट	:	मात्र	Rs. 425/-
5 कॉम्पेक्ट डिस्क (C. D.)	:	मात्र	Rs. 532/-

इसके साथ सत्संग की दो अनमोल पुस्तकें भेंट

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★

कैसेट विभाग, संत श्री आसारामजी महिला उत्थान आश्रम, साबरमती, अमदावाद-380005.

(B) सत्साहित्य का मूल्य इस प्रकार है :

हिन्दी किताबों का सेट	:	मात्र	Rs. 410/-
गुजराती ''	:	मात्र	Rs. 341/-
अंग्रेजी ''	:	मात्र	Rs. 105/-
मराठी ''	:	मात्र	Rs. 110/-

★ डी. डी. या मनीऑर्डर भेजने का पता ★

श्री योग वेदांत सेवा समिति, सत्साहित्य विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती , अमदावाद-380005.

नोट : अपना फोन हो तो फोन नंबर एवं पिन कोड अपने पते में अवश्य लिखें।

ज्ञान सोपान

जिन दिल बाँधा एक से...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

लगन लगन सब कोई कहे लगन न जाने कोई।
साची लगन सो कहे तन-मन विस्मृत होई ॥

परमात्म-प्राप्ति के लिए साधक तन-मन की सुध भूल जाए, त्रिबंध प्राणायाम करे, फल-दूध पर रहे एवं परमात्मा के स्मरण में लगा रहे, तो छः महीने में तो वह कहाँ-से-कहाँ पहुँच जाये। ध्रुव ने छः महीने में ही परमात्मा को पा लिया था।

सतयुग में १० साल में जो काम होता है, वह त्रेता में १ साल में, द्वापर में एक महीने में एवं कलियुग में एक दिन में ही हो जाता है। इस हिसाब से देखा जाए तो कलियुग बहुत हितकारी है। लेकिन ईश्वर-प्राप्ति की लगन नहीं है, सात्त्विक खुराक नहीं है, इसीलिए काम नहीं बनता।

ईश्वर की रुचि के अभाव में ही दुःख होता है और ज़ितने भी दुःख हैं, सब राग-द्वेष के ही फल हैं। ईश्वर में प्रीति करें तो तीन महीने में राग-द्वेष की जड़ कट जाये और छः महीने में ईश्वर-प्राप्ति हो जाये।

जो जीवन का मूल्य नहीं जानते, वे ही इधर-उधर की बातें करके खप जाते हैं। जो जीवन का मूल्य जानते हैं, वे जीवनदाता को पाये बिना चैन नहीं लेते।

भोग भोगते-भोगते तो सदियाँ बीत गयी हैं।

अब उसका आकर्षण छोड़कर अंतर्यामी परमात्मा के आनंद को, ज्ञान को, निष्ठा को जगायें। किस-किसको खुश करते फिरोगे ? किस-किसके मन की गुलामी करोगे ? एक भगवान को पा लो बस, गुरु के अनुभव को अपना अनुभव बना लो बस, हो गयी छुट्टी।

कबीरा इह जग आय के, बहुत से कीने मीत।
जिन दिल बाँधा एक से, वे सोये निश्चिंत ॥

अपने एक आत्मा में दिल को लगा दो... सोऽहं... शिवोऽहं... जिसने एक में दिल लगा दिया, वह अपनी आत्मा-परमात्मा की सुवास को पा लेता है, उसका हृदयरूपी पुष्प निखर जाता है। जैसे, खिले हुए पुष्प से सुगंध उभरती है, ऐसे ही अपने आत्मसुख को, आत्मतेज को, आत्मओज को वह पा लेता है। फिर वह हेय-उपादेयबुद्धि से रहित होता है। 'यह मुझे मिले... यह हट जाये तो मैं सुखी हो जाऊँ' - ऐसा उसको नहीं होता। वह अपने-आपमें खुश रहता है, अपने-आपमें पूर्ण होता है । जब तक अपने-आपमें पूर्णता नहीं मिली, तब तक चाहे कितने ही धन के ढेर मिल जायें फिर भी अंदर की पूर्णता के बिना मानव कंगाल ही रहता है । वह कई प्रमाणपत्र पा ले, फिर भी भीतर से खोखला ही रहता है, नाते-रिश्तेदारों को, सबको रिझा ले फिर भी दुःख बना रहता है।

सब दुःखों को मिटाने का एक ही उपाय है : दुःखहारी आत्मा के आनंद का अनुभव हो जाये। सबके अंतर में वह आनंद का स्रोत मौजूद है लेकिन शरीर और मन को सच्चा मानने के कारण ही उसका अनुभव नहीं होता । तन-मन को विस्मृत कर दो तो उसका अनुभव करना आसान हो जाये।

इधर-उधर की बातें याद रखकर शरीर और मन को खपा देना- यह अज्ञान है। परमात्मसुख को याद करके संसार में रहो लेकिन उसमें अपने को खपा न दो। जो लोग जगत को सच्चा मानते हैं और आत्मा की सच्चाई का पता नहीं है, ऐसे लोग ही दुःखी होकर रोते रहते हैं।

आप हो तो आनंदस्वरूप ईश्वर के सनातन अंश, फिर भी दुःखी हो रहे हो ?

खुशी से खा खुशी से पी, न गफलत में रहो एकदम।

उल्टा ज्ञान होना यह गफलत है । उल्टी इच्छाएँ, उल्टी मान्यताएँ होना गफलत है। उल्टा ज्ञान, उल्टी इच्छा एवं उल्टी मान्यता को हटाने के लिए सही ज्ञान, सही इच्छा एवं सही मान्यता चाहिए : 'मेरे ऐसे दिन कब आएँगे कि मैं सुख-दुःख में सम रहूँगा ? मेरे ऐसे दिन कब आएँगे कि मुझे किसीसे राग-द्वेष न रहेगा ? मेरे ऐसे दिन कब आएँगे कि मैं आत्मा-परमात्मा को पा लूँगा ?'

कोई अगर छः महीने के लिए भी तत्परता से लग जाए साधना में तो वह कहीं-का-कहीं पहुँच जाये। 'क्या करें ? करना पड़ता है...' यह हो गयी नौकरी। लेकिन साधक उत्साह से सेवा करे और कर्म का फल न चाहे तो कर्मयोग से भी साधक पार हो सकता है । सबकी रुचि भी नहीं होती ध्यानयोग में... इसीलिए तीन विभाग हैं क्योंकि तीन चीजें मनुष्य के अंदर स्वतःसिद्ध हैं : करने की शक्ति, मानने की शक्ति और जानने की शक्ति।

बालक भी कुछ-न-कुछ करता रहता है क्योंकि करने की शक्ति उसके पास भी है । किसीमें करने की शक्ति ज्यादा है, किसीमें मानने की शक्ति ज्यादा है तो किसीमें जानने की शक्ति ज्यादा है। जिसमें जानने की शक्ति ज्यादा है, वह आत्मज्ञान का विचार करे तो आत्मा-परमात्मा को जानकर उसमें टिक जायेगा। जिसके पास मानने की शक्ति ज्यादा है, वह भावना से भगवान को माने, भगवान की उपासना करे । जिसके पास करने की शक्ति है, वह निष्काम सेवा करे अथवा तो तीनों साथ में करे... सेवा करे तो निष्काम भाव से, माने तो भगवान को

और जाने तो भगवान को जाने। तीनों शक्तियों को साथ में लगा दे, लेकिन लगाये तो ईश्वर के लिए, भोग के लिए या अहंकार को सजाने के लिए नहीं। ईश्वर के लिए ही तत्परता से लगा दे।

साधक को चाहिए कि हर्ष-शोक को महत्त्व न दे। जो बातें करने एवं सुनने से जगत की सत्यता घुसती है, राग-द्वेष बढ़ता है, उन बातों को जहर समझे। जो बातें करने से, सुनने से भगवान में प्रीति बढ़ती है, भगवान में मन शांत होता है, भगवान ही सत्य एवं सार लगते हैं- वे ही बातें करे, वे ही बातें सुने।

व्यर्थ के चिंतन, व्यर्थ की कल्पना एवं व्यर्थ के कर्म से अपने को बचाओ और सार्थक चिंतन करो। सार्थक चिंतन है कि : 'मैं कौन हूँ ? शरीर क्या है ? जगत क्या है ? सुख-दुःख किसको होता है ?'

सदैव सावधान रहो। सुख का समय तो 'हा-हा... हू-हू' करके बीत जाता है लेकिन मृत्यु के बाद संगी-साथी कोई साथ नहीं आता। उस समय केवल ज्ञान ही रक्षण करता है। दुनियाँ भर के मित्र, स्नेही-कुटुंबी, रूपये-पैसे से वह भला नहीं होता, जो भला भगवान के ज्ञान से होता है। दुनियाँ भर की सारी विद्याएँ उतनी काम नहीं आतीं, जितनी आत्मविद्या काम आती है। दुनियाँ भर के मित्र उतने काम नहीं आते, जितनी परमात्मा का ज्ञान देनेवाले सद्गुरु की मित्रता काम आती है।

अतः हे साधक ! खोज ले किन्हीं ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु को, पहुँच जा उनके श्रीचरणों में, पा ले उनका मार्गदर्शन और चल पड़ उनके मार्गदर्शन के अनुसार... तो तेरा काम बन जायेगा।

*

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७५ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया जनवरी तक अपना नया पता भिजवा दें।
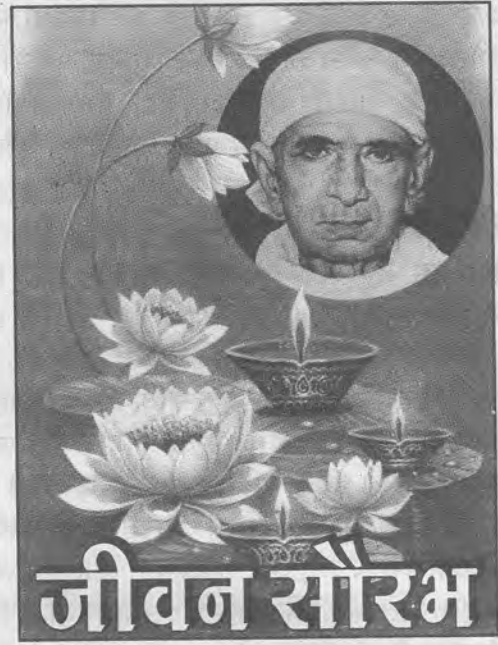
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

''जिस प्रकार नित्य घी, तेल जैसे चिकने पदार्थ खाने पर भी जीभ चिकनी नहीं होती क्योंकि जीभ का अपना रस होता है, इसीलिए दूसरा कोई रस उससे चिपकता नहीं है, उसी प्रकार **मन को भी भगवद्रस से रसमय कर दो तो वह जगत के मिथ्या रस से आकर्षित नहीं होगा।**''

संसार को एक धर्मशाला बताते हुए उन्होंने कहा :

''यह संसार एक धर्मशाला है। जिस प्रकार धर्मशाला में रहने से वहाँ के बर्तन, फर्नीचर, बिस्तर वगैरह मिल जाते हैं। उसका हम उपयोग तो कर लेते हैं किंतु उन्हें अपना नहीं मानते। उसी प्रकार संसार में रहो तब प्रारब्ध के अनुसार संसार की जो वस्तुएँ मिलें उनका उपयोग तो

करो परंतु उन्हें अपनी मत मानो। ऐसा करने से मोह नहीं होगा।

संसार तेरा घर नहीं, दो चार दिन रहना यहाँ।
कर याद अपने राज्य की, स्वराज्य निष्कंटक जहाँ॥

जिस प्रकार नदी पार करने के लिए नाव में कई लोग बैठते हैं और किनारा आते ही उतर जाते हैं। कोई भी उस नाव को अपनी नहीं मानता, उसीमें बैठा नहीं रहता। उसी प्रकार हम भी इस संसार में रहते हैं अतः सबके साथ हिलमिलकर रहते हुए भी अपनेको एक यात्री ही मानना चाहिए।''

पूज्य स्वामीजी श्रद्धालुओं को अपने समय का सदुपयोग कैसे करना चाहिए इसका संकेत करते थे। जिन मौज-शौकों से जीवनशक्ति का ह्रास होता है, कुसंस्कार पनपते हैं और शरीर रोगी बनता है उन सबसे सावधान रहने के लिए कहते। आज कल खूब व्यापक हुए टी. वी. और सिनेमा की बुराइयों से लोगों को सावधान करते हुए पूज्य स्वामीजी ने कहा :

''सिनेमा नहीं देखने चाहिए। सिनेमा देखने से मन पर बहुत खराब प्रभाव पड़ता है। उससे हममें कई प्रकार के स्थूल एवं सूक्ष्म दुर्गुण आ जाते हैं। सिनेमा देखने से फैशन एवं शृंगार के साथ चरित्रहीनता की बुराइयाँ फैलती हैं। कई लोग आँख के रोगों एवं वीर्यपात जैसी शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।''

दूसरे प्रसंग पर 'मन' के ऊपर सत्संग करते हुए पूज्य स्वामीजी ने कहा :

''मन पर तुम्हारा संयम हो और तुम सोच-विचार कर कार्य करो तो यह तुम्हारी आजादी है। परंतु तुम मन के दास हो जाओ और उसके कहने के अनुसार चलो तो यह मन के प्रति तुम्हारी गुलामी है। यहाँ विदेश में देखो, कितनी मनमुखता है! उठने-बैठने, खाने-पीने, घूमने, खर्च करने में सब प्रकार की स्वतंत्रता है। बेटे-बेटी, माता-पिता, सभी कमाते हैं। पता तक नहीं चलता कि वे कब घर में आते हैं और कब जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ या मन के अनुसार चलता है। ऐसी झूठी आजादी से कइयों का जीवन अस्तव्यस्त हो रहा है, चरित्र नष्ट हो रहा है, लोग अनेक रोगों के शिकार होते जा रहे हैं। टी. बी., कैन्सर, स्नायुरोग वगैरह पहले भारत में कहाँ थे ? भारतवासियों को यें बीमारियाँ विदेश से ही मिली हैं। तमाकू, बीड़ी, सिगरेट, चाय, शराब जैसे व्यसनों की बुराइयाँ व्यापक मात्रा में फैल रही हैं। मारपीट, आग, चोरी-डकैती जैसी घटनाएँ बड़े शहरों में सामान्य बनती जा रही हैं। ऐसी कष्टदायक आजादी से क्या लाभ ?''

पूज्य स्वामीजी ने शरीर को स्वस्थ रखने के लिए थोड़ी सूचनाएँ देते हुए कहा :

''शरीर को स्वस्थ रखने के लिए सात्त्विक, सादा एवं सुपाच्य आहार लेना चाहिए। भोजन शांत चित्त से, एकांत एवं पवित्र स्थान पर करना चाहिए। रोज कसरत करनी चाहिए। रोज सुबह-शाम नियमित प्राणायाम करने से मन प्रसन्न एवं शरीर फुरतीला रहता है। शरीर के स्वास्थ्य की सुरक्षा के साथ-साथ जिसने हमें मानव जन्म दिया है उस परम पिता परमात्मा का हमेशा स्मरण-चिंतन करना चाहिए। तुम्हारे जीवन पर योगासन, प्राणायाम एवं सात्त्विक आहार का सीधा असर पड़ता है।''

क्वालालम्पुर से पूज्य स्वामीजी २० जनवरी को मलायन रेलवे द्वारा पेनांग पहुँचे। वहाँ शहर से दूर श्री रामकृष्ण आश्रम में निवास किया। वहाँ काफी भक्तों को यौगिक क्रियाएँ एवं आसन सिखाये। वहाँ दो बार सत्संग किया जिसमें उन्होंने कहा :

''अंतःकरण में एकदम सच्चाई रखोगे एवं हृदय शुद्ध रखोगे तो तत्काल ज्ञान प्राप्त होगा। जो ज्ञानवान की सेवा करता है उसे ज्ञानवान के पुण्य मिलते हैं किंतु जो ज्ञानवान की निंदा करता है वह पाप का भागीदार बनता है। केवल ज्ञान

सुनने अथवा सुनाने से या ज्ञान की बातें करने से ज्ञान नहीं होता। वास्तव में सच्चा ज्ञान तो सद्गुरु के चरणों की निष्काम सेवा करने से ही मिलता है। जब शिष्य अपने गुरु की बिनशरती शरणागति स्वीकार कर लेता है, खुद अमानी बन जाता है, गुरु की इच्छा में अपनी इच्छा मिला देता है, तब ऐसे सत्शिष्यों के लिए ज्ञान का मार्ग सुगम हो जाता है।''

दूसरी बार पूज्य स्वामीजी ने गृहस्थ धर्म के ऊपर सत्संग करते हुए कहा :

''गृहस्थियों को हमेशा माता-पिता, आचार्य एवं अतिथि को पूजनीय मानना चाहिए। उनकी सेवा करनी चाहिए। रोज सुबह भगवान का स्मरण करना चाहिए। जहाँ तक हो सके वहाँ तक बुरे संग एवं बुरे कर्मों से बचना चाहिए। सदैव भलाई के कर्म करते रहना चाहिए और झूठ कभी नहीं बोलना चाहिए। संसार को स्वप्नवत् मानना चाहिए।

यह सब परमात्मा का खेल है। संसार गुलाब का फूल नहीं, वरन् काँटा है। अगर तुम भगवान को भूलकर स्वच्छंद होकर चलोगे अर्थात् बुरा संग, बुरे संकल्प एवं बुरे कर्म करोगे तो वे काँटे तुम्हें लगेंगे, तुम दुःखी होगे। किन्तु मन, देह, इन्द्रियों का संयम करोगे और भगवान का स्मरण करोगे तो सच्चा आनंद प्राप्त करोगे।''

यहाँ पूज्य स्वामीजी ने एक सप्ताह रहकर अपनी ज्ञानवाणी द्वारा श्रोताओं को लाभान्वित किया।

पेनांग के बाद टीपंग में तीन दिन रहे। यहाँ सिक्ख लोगों के गुरुद्वारे में सत्संग का आयोजन किया गया। सत्संग की महिमा समझाते हुए पूज्य स्वामीजी ने कहा :

''मन को जीतने के लिए सत्संग की अत्यंत आवश्यकता है। सत्संग का अर्थ क्या है ? जिसके संग द्वारा सत् वस्तु की प्राप्ति हो वह सत्संग। शास्त्रों में सत्संग की अपार महिमा कही गयी है।'' (क्रमशः)

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

स्वामी विवेकानंद की प्रार्थना

नरेन्द्र के पिता का देहावसान हो जाने के कारण पूरे परिवार के भरण-पोषण का दायित्व उन पर आ गया था। उनकी आर्थिक स्थिति निरंतर कमजोर होती जा रही थी। ऐसे समय में उन्हें हुआ कि : 'मेरी दरिद्रता बढ़ती ही जा रही है। दक्षिणेश्वर में श्री रामकृष्ण परमहंस नामक बड़े ही समर्थ संत रहते हैं। वे चाहें तो मेरी दरिद्रता दूर हो सकती है। मुझे उनकी शरण में जाना चाहिए।'

नरेन्द्र दक्षिणेश्वर गये और परमहंस के श्रीचरणों में प्रार्थना की : ''ठाकुर ! मैंने नौकरी के लिए बहुत प्रयत्न किये लेकिन असफल रहा। मेरी गरीबी बढ़ती ही जा रही है और इससे कर्ज का बोझ भी बढ़ रहा है। इस प्रकार पूरे कुटुम्ब का भरण-पोषण दूभर होता जा रहा है। आप तो माँ काली के परम भक्त हैं। कृपा करके मेरी दरिद्रता के निवारण के लिए उनसे प्रार्थना कीजिए। माँ आपकी बात अवश्य सुनेंगी।''

परमहंस : ''नरेन्द्र ! माँ तो तुमसे कुछ बड़ा कार्य करवाना चाहती हैं। वे तो तुमसे लोगों के दिल की दरिद्रता को दूर करने का काम करवाना चाहती हैं और मैं तुम्हारी दरिद्रता को दूर करने के लिए माँ से प्रार्थना करूँ ?''

नरेन्द्र : ''ठाकुर ! आप कृपा करके माँ से

कहकर मेरी दरिद्रता दूर करवा दीजिए न !''

परमहंस : ''अच्छा... तो लो। उठाओ यह पूजा की थाली और जाओ मंदिर में। माँ की पूजा करके उनसे तुम ही कह दो कि माँ मेरी दरिद्रता दूर करके मुझे सुख-संपदा दे दो।''

नरेन्द्र ने माँ काली के मंदिर में जाकर बड़ी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक माँ की पूजा की। पूजा करते-करते भावविभोर होकर वे प्रार्थना करने लगे :

''माँ ! मुझे तेरी अटल भक्ति दे... ज्ञान दे... तेरा ध्यान दे। तेरे चरणों में मेरी प्रीति बढ़ा दे।''

नरेन्द्र जब पूजा करके बाहर आये तो ठाकुर ने पूछा : ''क्या माँगा ?''

नरेन्द्र : ''मैंने तो प्रार्थना की कि माँ ! तेरी अटल भक्ति दे, ज्ञान दे, ध्यान दे, तेरी प्रीति दे।''

परमहंस : ''जाओ, फिर से पूजा करके प्रार्थना करो।''

नरेन्द्र पुनः पूजा करने गये। उन्हें माँगनी तो थी धन-संपदा, किन्तु दुबारा भी वे यही प्रार्थना करने लगे : ''माँ ! मुझे अटल भक्ति दे... श्रद्धा दे... धैर्य दे। मुझे तेरे चरणों की प्रीति दे... भक्ति दे... ज्ञान दे। माँ ! मुझे नश्वर धन नहीं, शाश्वत् धन चाहिए।''

नरेन्द्र के बाहर निकलने पर परमहंसजी ने पुनः पूछा : ''बोलो, क्या माँगा ?''

नरेन्द्र : ''मैं तो भूल ही गया। दुबारा भी वही माँग बैठा, जो पहले माँगा था।''

परमहंस : ''तीसरी बार फिर जाओ लेकिन इस बार जरा सावधानी से माँगना।''

नरेन्द्र फिर से मंदिर में गये लेकिन इस बार भी नरेन्द्र ने वही श्रद्धा-भक्ति-ज्ञान की माँग की।

बाहर निकलने पर परमहंस ने फिर से प्रश्न किया : ''क्या माँगा ?''

नरेन्द्र : ''ठाकुर ! गलती हो गयी। फिर वही माँग लिया।''

परमहंस : ''नरेन्द्र ! तुम नश्वर धन कैसे माँग सकते थे ? कितने ही धनवान् तुम्हारे चरणों में अपने दुःख मिटायेंगे और कितने ही सत्तावान् तुम्हारे चरणों में बैठकर शांति पायेंगे। तुमने तो ऐसा शाश्वत् धन माँग लिया है।''

वही नरेन्द्र आगे चलकर स्वामी विवेकानंद के रूप में प्रसिद्ध हुए। दुनियाँ जानती है कि फिर कई सत्ताधीश एवं धनवान् उनके श्रीचरणों में शांति पाने के लिए लालायित रहते थे।

वास्तव में, आंतरिक धन के आगे बाह्य संपदा कुछ महत्त्व नहीं रखती। जिसने भीतर का धन पा लिया, जिसने भक्ति, ज्ञान और वैराग्यरूपी धन पा लिया, बाह्य संपदा तो उसकी दासी होकर रहती है। ऐसा है वह धन !

*

सबमें गुरु का ही स्वरूप नजर आता है

गुरु गोविन्दसिंह का शिष्य कन्हैया युद्ध के मैदान में पानी की प्याऊ लगाकर सभी सैनिकों को पानी पिलाता था। कभी-कभी मुगलों के सैनिक भी आ जाते थे पानी पीने के लिए।

यह देखकर सिक्खों ने जाकर गुरु गोविन्दसिंह से कहा : ''गुरुजी ! यह कन्हैया अपने सैनिकों को तो जल पिलाता ही है किन्तु दुश्मन सैनिकों को भी पिलाता है। दुश्मनों को तो तड़पने देना चाहिए न ?''

गुरु गोविन्दसिंह ने कन्हैया को बुलाकर पूछा : ''क्यों भाई ! दुश्मनों को भी पानी पिलाता है ? अपनी ही फौज को पानी पिलाना चाहिए न ?''

कन्हैया : ''गुरुजी ! जबसे आपकी कृपा हुई है तबसे मुझे तो सबमें आपका ही स्वरूप दिखता है। अपने-पराये सबमें मुझे तो मेरे गुरुदेव ही लीला करते नजर आते हैं। मैं अपने गुरुदेव को देखकर कैसे इन्कार करूँ ?''

तब गुरु गोविंदसिंह ने कहा : ''सैनिकों ! कन्हैया ने जितना मुझे समझा है, इतना तुममें से किसीने नहीं समझा। कन्हैया को अपना काम करने दो।''

जिन्हें परमात्मतत्त्व का, गुरुतत्त्व का बोध हो जाता है, उनके चित्त से शत्रुता, घृणा, ग्लानि, भय, शोक, प्रलोभन, लोलुपता, अपना-पराया आदि की सत्यता, ये सब विदा हो जाते हैं।

*

ज्ञानी के लक्षण

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में भगवान रामचंद्रजी श्री वशिष्ठजी महाराज से पूछते हैं :

''हे भगवन् ! जिन पुरुषों को आत्मा-परमात्मा का साक्षात्कार हुआ है, वे कैसे हो जाते हैं और उनका कैसा आचार होता है, यह मुझसे कृपा करके कहिये ।''

श्री वशिष्ठजी कहते हैं :

''हे राम ! सबके साथ उनका मित्रभाव होता है । पाषाण से भी उनकी मित्रता होती है । बन्धुओं को वे ऐसे जानते हैं, जैसे वन के वृक्ष और पत्ते होते हैं । स्त्री-पुत्रादिक के साथ वे वन के मृग की तरह रहते हैं अर्थात् जैसे जंगली मृगों को संतान से स्नेह नहीं होता, वैसे ही वे भी पुत्रादि में स्नेह नहीं रखते । वे सब पर दया करते हैं और निश्चय में उदासीन रहते हैं । आपदा उनको परम सुखरूप होती है । वे न किसी में राग करते हैं और न किसी से द्वेष । वे व्यवहार करते हुए तो दिखते हैं, परंतु निश्चय में परम शून्य और मौन होते हैं अर्थात् सदा समाधि में स्थित रहते हैं । वे सब कर्म करते हुए दिखते हैं किन्तु उन्हें इस प्रकार करते हैं कि सब उनकी स्तुति करते हैं । वे सुख-दुःख की प्राप्ति में समबुद्धि रखते हैं । प्रकृत आचार यथाशास्त्र करते हैं, परंतु अपने स्वरूप से कभी विचलित नहीं होते । सुख-दुःख के भोग ज्ञानवान में भी दिखते हैं, परंतु वे अपने वास्तविक स्वरूप से कभी चलायमान नहीं होते । चेष्टा वे अज्ञानी की नाईं करते हैं, परंतु निश्चय में परम समाधिस्थ रहते हैं । न उनसे कोई खिन्न होता है और न वे किसी से खिन्न होते हैं । वे सब पर दया रखते हैं और पतितप्रवाह में जो सुख-दुःख आकर प्राप्त होता है, उसको भोगते हैं । वे बाहर अज्ञानी की नाईं व्यवहार करते हैं, परंतु निश्चय में जगत को भ्रान्तिमात्र जानते हैं अथवा सब ब्रह्म जानते हैं ।

ज्ञानवान कर्म करते हैं, परंतु कर्म में अकर्म को जानते हैं और जीते भी मृतक की नाईं हैं । प्रत्यक्ष व्यवहार उनमें दिखता भी है, परंतु उनके निश्चय में जगत का अर्थ शांत हो गया है । ज्ञानी सर्वदा परम श्रेष्ठ हो जाते हैं, संपूर्ण जगत से ऊँचे विराजते हैं और परम दया की खान होते हैं । दया का स्थान ज्ञानवान ही हैं । ज्ञानवान सबका हृदय हैं । ज्ञानी को शान्तियुक्त देखकर औरों को भी प्रसन्नता हो आती है । ज्ञानवान की संगति शीतलता उपजाती है । ज्ञानवान आत्मपद को पाकर आनन्दित होते हैं और वह आनन्द कभी दूर नहीं होता क्योंकि उनको उस आनन्द के आगे अष्टसिद्धियाँ तृणवत् लगती हैं ।

हे राम ! ऐसे पुरुष कई तो एकांत में जा बैठते हैं, कई शुभ स्थानों में रहते हैं, कई गृहस्थी में ही रहते हैं, कई अवधूत होकर सबको दुर्वचन कहते हैं, कई तपस्या करते हैं, कई परम ध्यान लगाकर बैठते हैं, कई नंगे फिरते हैं, कई राज्य करते हैं, कई पण्डित होकर उपदेश करते हैं, कई परम मौन धारे हैं, कई पहाड़ की कन्दराओं में जा बैठते हैं, कई ब्राह्मण हैं, कई संन्यासी हैं, कई अज्ञानी की नाईं विचरते हैं, कई नीच पामर की नाईं होते हैं, कई आकाश में उड़ते हैं और नाना प्रकार की क्रिया करते दिखते हैं, परंतु सदा अपने स्वरूप में स्थित रहते हैं । उन मुक्त पुरुषों को संसार का सुख-दुःख व्याप नहीं सकता क्योंकि वे परम अद्वैत

शुद्ध सत्ता को प्राप्त हुए हैं।''

श्री वशिष्ठजी महाराज की कृपा और उपदेश से रामजी को जब आत्मज्ञान में स्थिति हुई, तब रामजी कहते हैं :

''हे भगवन् ! आपकी कृपा से मुझको कोई कलना नहीं फुरती। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र से लेकर तृण पर्यंत जो कुछ जगत है, वह सब मुझको आकाशरूप भासित होता है। सर्वदा एवं सब प्रकार से मैं अपने आपमें स्थित, अच्युत और अद्वैतरूप हूँ। मुझमें जगत की कोई कलना नहीं। चित्तसंवेदन द्वारा मैं ही जगतरूप होकर भासित होता हूँ, पर स्वरूप से मैं कभी चलायमान नहीं होता। मैं अचिंत्य चिन्मात्रस्वरूप हूँ। अपने से भिन्न मुझको कुछ नहीं भासित होता।''

('श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण')

ईश्वर का मार्ग परिणाम में अमृततुल्य

वे अभागे हैं जो संसार के सुख भोगने में ही लगे हैं। संसार के सुख भोगने में जो भी लगे हैं, उन बेचारों को दुःख-ही-दुःख उठाना पड़ता है। लेकिन भगवद्शांति, भगवद्रस पाने की तरफ जो चलते हैं, आरंभ में वे अल्प वस्तुओं में सीधा-सादा जीवन जीते हुए दिखते हैं लेकिन अंत में वे ही सच्चा सुख, सच्ची शांति पाते हैं और सत्यस्वरूप भगवान में मिल जाते हैं।

संसार के सुख दिखते सुख हैं, लेकिन भरे होते हैं दुःख से। ईश्वर का रास्ता लगता है आरंभ में दुःखद, किन्तु परिणाम में अत्यंत सुखद है, अद्भुत आनंद से पूर्ण है।

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जो सुख लव सत्संग...

तुलसीदासजी महाराज कहते हैं :

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला इक अंग।
तुलि न ताहि सकल मिली, जो सुख लव सत्संग॥

समस्त स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) के सुख को तराजू के एक पलड़े पर रखें और दूसरे पलड़े पर एक क्षण के सत्संग के फल को रखें तो भी एक क्षण के सत्संग की बराबरी नहीं हो सकती। इतनी बड़ी सत्संग की महिमा है !

सत्संग एक ऐसा जीवनरस है जो मनुष्य के सारे भय, चिन्ता, शोक, मोह, अहंकार, तनाव को मिटा देता है, सारी बेवकूफी दूर कर देता है, तमाम बोझ हटा देता है। बिना सत्संग के कोई पूर्ण सुखी हो जाये, यह संभव नहीं है। आकाश को अगर कोई चर्म की तरह लपेटकर बगल में रख सकता है, तो आदमी बिना सत्संग के भी सुखी हो सकता है। लेकिन ऐसा संभव नहीं है। विलक्षण बुद्धिवाले महापुरुषों और विचारकों का सबका यही मत है।

सत्संग की प्राप्ति होना महा पुण्यों का फल है और सत्संग का त्याग महा पापों का फल है। कई लोगों को ऐसी भ्रान्ति होती है कि हमने क्या पाप किये हैं कि कथा में जायें, सत्संग में जायें

और संतों के दर्शन करें ? सत्संग में जाने से पाप धुलते हैं और जब पाप ही नहीं किये तो सत्संग में जाने की क्या जरूरत ?

अरे मेरे भैया ! तुमने पाप किये हों तो सत्संग में जाना चाहिए और पाप नहीं किये हों तो सत्संग में नहीं जाना चाहिए, ऐसी बात नहीं है। पुण्य-पाप का मिश्रण होता है, तभी मानव तन मिलता है। जन्म लिया यह दुःख... जरा आये तो दुःख... व्याधि आयी तो दुःख... मरे तब भी दुःख... ये तो पीछे लगे ही हुए हैं और सच बात तो यह है कि अति पापी मनुष्य सत्संग में जा भी नहीं सकता।

शुकदेवजी महाराज समाधि में मस्त थे। उनके पिता श्री वेदव्यासजी ने भागवत के अठारह हजार श्लोकों की रचना की। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा : ''शुकदेवजी जैसे विरक्त को अगर आकर्षित करना है तो भक्ति के, ज्ञान के और सत्संग के इन पदों से ही वे आकर्षित होंगे, और किसी प्रलोभन से उन्हें आकर्षित कर पाना संभव नहीं है।''

उन्होंने अपने शिष्यों को भागवत के श्लोक रटाये और कहा : ''तुम वहाँ जंगल में जब कुशा आदि लेने जाते हो, तब इन्हें गाना और शुकदेवजी के कानों में पड़े ऐसे अलापना।''

शुकदेवजी के कान में जब श्रीमद्भागवत के श्लोक पड़े, तब शुकदेवजी समाधि छोड़कर उठे और बोले : ''अहाहा... यह कौन गा रहा है ?''

उन्होंने फिर भागवत के बारे में पूछा और भागवत सीखा। वही भागवत परीक्षित को सुनाया और उस निमित्त से अभी लाखों लोग भागवत का रसपान कर रहे हैं। भक्ति और सत्संग एक अमोघ शस्त्र है।

सत्संग में हरि का वास होता है, परमात्मा का निवास होता है। तभी कबीरजी कहते हैं :

राम परवाना भेजिया, वाँचत कबीरा रोय।
क्या करूँ तेरी वैकुंठ को, जहाँ साध-संगत नहीं होय॥

जहाँ साध-संगत न हो अर्थात् सत्संग न मिले, वह स्वर्ग भी विवेक-विचारवान को सुखद नहीं लगता और जहाँ सत्संग होता है, वह नरक भी दुःखद नहीं लगता। सत्संग की ऐसी महिमा है। इसलिए हजार काम छोड़कर भी सत्संग करना चाहिए।

सत्संग की आधी घड़ी, सुमिरन वर्ष पचास।
बरखा बरसे एक घड़ी, अरट फिरे बारों मास॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि सत्संग और हरिकथा के बिना मोह नहीं जाता और मोह गये बिना श्रीराम के चरणों में दृढ़ अनुराग नहीं हो पाता। अतः सत्संग जीवन में परम आवश्यक है।

बिनु सत्संग न हरिकथा, ते बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु रामपद, होवहिं न दृढ़ अनुराग॥

*

ईश्वर पर भरोसा नहीं है !

प्रोफेसर तीर्थराम को नश्वर संसार के प्रति वैराग्य हो आया। अतः नौकरी से त्यागपत्र देकर उन्होंने हिमालय जाने का निश्चय कर लिया।

उनके मित्र एवं पत्नी तथा पुत्रों ने भी साथ जाने की जिद पकड़ी। तब तीर्थराम ने कहा :

''चलो, कोई बात नहीं... किन्तु हम तो संन्यास लेकर ईश्वर के लिए जियेंगे। तुम लोगों को भी उसी तरह जीना हो तो चलो। किन्तु एक बात का ध्यान रखना कि कुछ भी साथ लेकर मत चलना।''

सब निकल पड़े। रास्ते में किसी वृक्ष तले सब ध्यान करने बैठे। तीर्थराम भी किसी टीले पर जा बैठे। इतने में भोजन का समय हुआ। एक आदमी को हुआ : 'ये लोग काफी देर से बैठे हैं। इन्हें भूख लगी होगी। चलो पूछकर देखते हैं।' उसने जाकर तीर्थराम से पूछा :

''आप लोग भोजन करेंगे ?''

तीर्थराम : ''कौन करायेगा ?''

व्यक्ति : ''मैं कराऊँगा।''

तीर्थराम को हुआ : इस 'मैं-मैं' वाले का भोजन नहीं करना है । उन्होंने उसे मना कर दिया ।

फिर काफी समय बीत गया किंतु कोई भी भोजन लेकर नहीं आया। तब तीर्थराम ने कहा :

''देखो, अपने पास जरूर कुछ-न-कुछ पड़ा होगा। जाँचो कि पास में क्या है।''

जाँच करने पर पता चला कि पत्नी ने एक अंगूठी छुपाकर रखी थी, यह सोचकर कि 'कहीं भूखे मरेंगे तो इसका उपयोग करेंगे।' तीर्थराम ने यह देखकर कहा :

''इसीलिए वह परमात्मा अभी तक भोजन लेकर नहीं आया क्योंकि आप लोगों ने पूरी तरह से उस पर भरोसा नहीं किया। अभी-भी अंगूठी का भरोसा है, ईश्वर का भरोसा नहीं है।''

तीर्थराम ने अंगूठी फिकवा दी गंगाजी में । बैठ गये सर्वस्व त्यागकर सर्वेश्वर के चरणों में । किया किसी सक्षम व्यक्ति को प्रेरित उस प्रभु ने। तीर्थराम के पास हाथ जोड़कर उस प्रभुप्रेरित भक्त ने भोजन करने के लिये प्रार्थना की । तीर्थराम ने वही सवाल दुहराया : ''कौन करायेगा भोजन ?''

धनी भक्त ने कहा : ''महाराज ! जिस प्रभु ने प्रेरणा की वही तो करवा रहा है ! जो आपके, मेरे और विश्व के अंदर व्याप रहा है, जो सर्वसमर्थ है, सर्वांतर्यामी है और सर्व का सुहृद है वही सर्वेश्वर है महाराज खाने-खिलानेवाला।''

समझदार, नम्र, पुण्यात्मा धनी भक्त पर तीर्थराम का चित्त प्रसन्न हुआ। उन्होंने सस्नेह भोजन किया।

ईश्वर की जगह पर जो तुच्छ वस्तुओं के और अहं के आधार की प्रधानता होती है तो समझो संसारचक्र चालू रहेगा।

*

साध्वी सिरमा

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सिंहल देश (वर्त्तमान श्रीलंका) के एक सदाचारी परिवार में जन्मी हुई कन्या सिरमा में बाल्यकाल से ही भगवद्-भक्ति प्रस्फुटित हो चुकी थी। वह जितनी सुंदर थी, उतनी ही सुशील भी थी। १६ वर्ष की उम्र में उसके माँ-बाप ने एक धनवान परिवार के युवक सुमंगल के साथ उसकी शादी करवा दी।

शादी के पश्चात् सुमंगल विदेश गया। वहाँ वह वस्तुओं का आयात-निर्यात करता था। कुछ वर्षों में उसने काफी संपत्ति इकट्ठी कर ली और स्वदेश लौटने लगा। कुटुंबियों ने देखा कि सुमंगल वर्षों बाद घर लौट रहा है, अतः उसका आदर-सत्कार होना चाहिए। गाँव भर के जाने-माने लोगों को आमंत्रित किया गया और सब सुमंगल को लेने चले । भीड़ में उस जमाने की प्रसिद्ध गणिका मंदारमाला भी थी।

मंदारमाला के सौंदर्य को देखकर सुमंगल मोहित हो गया एवं सुमंगल के आकर्षक व्यक्तित्व से मंदारमाला भी घायल हो गयी । भीड़ को समझते देर न लगी कि दोनों एक-दूसरे से घायल हो गये हैं । सुमंगल को लेकर शोभायात्रा उसके घर पहुँची । सुमंगल को उदास देखकर सिरमा भी सब समझ गयी और बोली :

''देव ! आप बड़े उदास एवं व्यथित लग रहे हैं। आपकी उदासी एवं व्यथा का कारण मैं जानती हूँ।''

सुमंगल : ''जब जानती है तो क्या पूछती है ? अब उसके बिना नहीं रहा जाता है।''

सिरमा ने यह सुनकर भी अपना संतुलन न खोया क्योंकि वह प्रतिदिन भगवान का ध्यान करती थी एवं शांत स्वभाव का धन उसके पास था, विवेक-वैराग्यरूपी धन उसके पास था, विपत्तियों में भी प्रसन्न रहने की समझ का धन उसके पास था।

सुविधाएँ हों और आप प्रसन्न रहें- इतना तो लालिया, मोतिया और कालिया कुत्ता भी जानता है जो जलेबी देखकर पूँछ हिला देता है और डंडा देखकर पूँछ दबा देता है। सुख में सुखी एवं दुःख में दुःखी हुए तो फिर लालिया-मोतिया-कालिया से आपने ज्यादा प्रगति नहीं की।

उत्तम मनुष्य तो वह है जो सुख में भी सुखी और दुःख में भी सुखी रहता है। इससे भी श्रेष्ठ मनुष्य वह है जो सुख में आसक्त नहीं होता एवं दुःख में दुःखी नहीं होता लेकिन सर्वोत्तम तो वह है जो सुख-दुःख को सपना मानता है एवं सच्चिदानंद परमात्मा को अपना मानता है।

सिरमा ने कहा : ''नाथ ! आपकी परेशानी का कारण तो मैं जानती ही हूँ, उसे दूर करने में भी मैं पूरा सहयोग दूँगी। आप अपनी परेशानियों को मिटाने में मेरे पूरे अधिकार का उपयोग कर सकते हैं। कोई उपाय खोजा जायेगा।''

इतने में ही मंदारमाला की नौकरानी आकर बोली :

''सुमंगल ! आपको मेरी मालकिन अपने महल में बुला रही हैं।''

सिरमा ने कहा : ''जाकर अपनी मालकिन से कह दो कि इस बड़े घर की बहूरानी बनना चाहती हो तो तुम्हारे लिये द्वार खुले हैं। सिरमा अपने सारे अधिकार तुम्हें सौंपने को तैयार है लेकिन इस बड़े खानदान के लड़के को अपने अड्डे पर बुलाकर कलंक का टीका मत लगाओ। यह मेरी प्रार्थना है।''

सिरमा की नम्रता ने मंदारमाला के हृदय को द्रवित कर दिया और वह वस्त्रालंकार से सुसज्ज होकर सुमंगल के घर आ गयी। सिरमा ने दोनों का गंधर्व विवाह करवा दिया। विवाह करवाकर सिरमा ने साध्वी की दीक्षा ले ली। सिरमा की समझ, तत्परता, मंत्रजाप की तत्परता ने उसे ऋद्धि-सिद्धि की मालकिन बना दी। सिरमा का मनोबल, बुद्धिबल, तपोबल और यौगिक सामर्थ्य इतना निखरा कि कई साधक सिरमा को प्रणाम करने आते थे।

एक दिन एक साधक सिरमा के पास आया जिसका सिर फूटा हुआ था और खून बह रहा था। सिरमा ने पूछा :

''भिक्षुक ! तुम्हारा सिर फूटा है... क्या बात है ?''

भिक्षुक : ''मैं भिक्षा लेने के लिए गया था। मंदारमाला के हाथ में जो बर्तन था उसी बर्तन से मुझे दे मारा। इससे मेरा सिर फूट गया।''

सिरमा को बड़ा दुःख हुआ कि मंदारमाला को पूरी जायदाद मिल गयी और मेरा ऐसा सुंदर, धनी, प्रवित्र स्वभाववाला व्यापारी पति मिल गया, फिर क्यों दुःखी है ? संसार में जब तक सच्ची समझ, सच्चा ज्ञान नहीं मिलता, तब तक मनुष्य के दुःखों का अंत नहीं होता। जब तक सत् का संग नहीं होता, तब तक दुःखों का अंत नहीं होता। शायद वह दुःखी होगी। और दुःखी व्यक्ति ही साधुओं को दुःख देगा। सज्जन व्यक्ति साधुओं को दुःख नहीं देगा वरन् उनसे भी सुख ले लेगा, आशीर्वाद ले लेगा। मंदारमाला अति दुःखी है, तभी उसने भिक्षुक को भी दुःखी कर दिया।

सिरमा गयी मंदारमाला के पास और बोली :

''मंदारमाला ! इस भिक्षुक के, अकिंचन साधु के भिक्षा माँगने पर भिक्षा नहीं देती तो

चलता, लेकिन उसका सिर क्यों फोड़ दिया ?''

मंदारमाला : ''बहन ! मैं बहुत दुःखी थी। सुमंगल ने तुझे छोड़कर मुझसे शादी की और अब मेरे होते हुए एक दूसरी नर्तकी के यहाँ जाता है। वह मुझसे कहता है कि मैं परसों उसके साथ शादी कर लूँगा। मैंने तो अपने सुख को संभाल रखा था लेकिन सुख तो सदा टिकता नहीं है। तुम्हारा दिया हुआ यह खिलौना अब दूसरा खिलौना लेने को भाग रहा है।''

सिरमा को दुःखाकार वृत्ति का थोड़ा धक्का लगा, किंतु वह सावधान थी। रात्रि को वह अपने कक्ष में दीया जलाकर बैठ गयी एवं प्रार्थना करने लगी : 'हे भगवान ! तुम प्रकाशस्वरूप हो, ज्ञानस्वरूप हो। मैं तुम्हारी शरण आयी हूँ। तुम अगर चाहो तो सुमंगल को वास्तव में सुमंगल बना सकते हो। सुमंगल, जिससे जल्दी मृत्यु हो जाये ऐसे भोग-पर-भोग बढ़ा रहा है एवं नरक की यात्रा कर रहा है। उसे सत्प्रेरणा देकर, इन विकारों से बचाकर, अपने निर्विकारी, शांत, आनंद एवं माधुर्यस्वरूप में लगाने में हे प्रभु ! तुम सक्षम हो...'

सिरमा प्रार्थना किये जा रही है एवं टकटकी लगाकर दीये की लौ को देखे जा रही है। ध्यान करते-करते सिरमा शांत हो गयी। उसकी शांति ही परमात्मा तक पैगाम पहुँचाने का साधन बन गयी। ध्यान करते-करते उसे कब नींद आ गयी, पता नहीं। लेकिन जो नींद के समय भी तुम्हारे चित्त की चेतना को, रक्तवाहिनियों को सत्ता देता है, वह प्यारा कैसे चुप बैठता ?

प्रभात में सुमंगल को भयानक स्वप्न आया कि 'मेरा विकारी-भोगी जीवन मुझे अकाल मृत्यु की ओर घसीट रहा है। यमदूत मुझे घसीटकर यमराज के पास ले गये एवं तमाम भोगियों की जो दुर्दशा हो रही है, मेरी भी वही दशा होने जा रही है। हाय ! मैं यह क्या देख रहा हूँ ?' सुमंगल चौंक उठा और उसकी आँख खुल गयी। प्रभात का स्वप्न सत्य का संकेत देनेवाला होता है।

सुबह होते-होते सुमंगल ने अपनी सारी धन-संपत्ति गरीब-गुरबों में बाँटकर एवं सत्कर्मों में लगाकर दीक्षा ले ली। अब तो सिरमा जिस रास्ते जा रही है, भोग के कीचड़ में पड़ा हुआ सुमंगल भी उसी रास्ते अर्थात् आत्मोद्धार के रास्ते जाने का संकल्प करके चल पड़ा।

कब, किस व्यक्ति के अंतःकरण में वह अंतःचेतना जाग्रत हो और वह भोग के दलदल से तथा अहंकार के विकट मार्ग से बचकर सहज स्वभाव सरल मार्ग से सत्-चित्-आनंदस्वरूप ईश्वर की ओर चल पड़े, कहना मुश्किल है।

धन्य है सिरमा, जो स्वयं तो उस पथ पर चली ही, साथ ही अपने विकारी पति को भी उस पथ पर चलाने में सहायक हो गयी !

*

'आप तो खुदा से भी बड़े हैं...'

एक बार अकबर ने बीरबल से पूछा : ''बीरबल ! मैं बड़ा हूँ न ?''

तब बीरबल ने कहा : ''जहाँपनाह ! आप तो बहुत बड़े हैं... खुदा से भी बड़े हैं।''

अकबर : ''बीरबल ! यह क्या खुशामदखोरों की बात करते हो ? मैं खुदा से बड़ा कैसे ?''

बीरबल : ''जहाँपनाह ! खुदा किसीको अपनी सृष्टि से बाहर नहीं निकाल सकते। खुदा कहीं जा भी नहीं सकते क्योंकि वे सर्वव्यापक हैं। किन्तु आप तो कहीं भी जा सकते हैं और किसीको भी अपने राज्य से निकाल सकते हैं।''

वास्तव में यही ईश्वर की महानता और विशेषता है।

विद्यार्थियों के लिए माँ सरस्वती की उपासना

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'श्रीसरस्वतीस्तोत्रम्' में माँ श्री सरस्वती देवी की वंदना करते हुए कहा गया है :

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फटिकमालिकां च दधतीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥

'जिनका रूप श्वेत है, जो ब्रह्मविचार की परम तत्त्व हैं, जो सब संसार में व्याप्त हैं, जो हाथों में वीणा और पुस्तक धारण किये रहती हैं, अभय देती हैं, मूर्खतारूपी अन्धकार को दूर करती हैं, हाथ में स्फटिकमणि की माला लिये रहती हैं, कमल के आसन पर विराजमान हैं और बुद्धि देनेवाली हैं, मैं उन आद्या परमेश्वरी भगवती सरस्वती की वंदना करता हूँ ।'

माँ सरस्वती विद्या की देवी हैं ।

माघ शुक्ल पंचमी के दिन अर्थात् वसंत पंचमी के दिन उनकी बड़ी भव्यता से पूजा-उपासना की जाती है। इसी दिन भगवान श्रीकृष्ण ने भी भगवती सरस्वती की पूजा की थी।

यदि विद्यार्थी श्रद्धा-भक्ति एवं विश्वासपूर्वक उनकी आराधना-उपासना एवं अनुष्ठान करे तो केवल विद्या के क्षेत्र में ही नहीं, वरन् जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकता है।

यदि विद्यार्थी सद्गुरु से प्राप्त सारस्वत्य मंत्र का अनुष्ठान विधिपूर्वक कर ले तो फिर कहना ही क्या ? सारस्वत्य मंत्र के अनुष्ठान के प्रभाव से विद्यार्थी का जीवन तेजस्वी, ओजस्वी एवं दिव्य बनता है ।

अनुष्ठान-विधि

सारस्वत्य मंत्र का अनुष्ठान केवल सात दिन का होता है । इसमें प्रतिदिन १७० माला करने का विधान है ।

अनुष्ठान के दौरान सात दिन तक विद्यार्थी को केवल श्वेत वस्त्र ही पहनने चाहिए। सात दिन तक भोजन भी बिना नमक का करना चाहिए । दूध-चावल की खीर बनाकर, देवी को भोग लगाकर खाना चाहिए ।

देवी सरस्वती की पूजा भी श्वेत पुष्प, श्वेत चंदन एवं श्वेत आभूषणों से ही करनी चाहिए।

जप स्फटिक के मोतियों की माला से किया जाये तो ज्यादा लाभदायी होता है ।

जप पवित्र स्थान पर, पवित्रता से, विद्युत के अवाहक आसन पर, मौनपूर्वक, पूर्व या उत्तर दिशा की ओर बैठकर करना चाहिए ।

विद्यार्थी को चाहिए कि माँ सरस्वती से शुद्ध बुद्धि के लिए प्रार्थना करे। श्रद्धा एवं विश्वासपूर्वक किया गया अनुष्ठान विद्यार्थीजीवन में चार चाँद लगा देता है।

माँ सरस्वती की आराधना-उपासना एवं मंत्रजाप से ऐहिक विद्या में तो प्रगति होती ही है, आत्मविद्या का मार्ग भी प्रशस्त बनता है ।

*

गौमाता : ऊर्जा का अक्षय स्रोत

[गतांक का शेष]

यदि कृषि कार्यों से बैलों को निकाल दिया जाए तो उसकी स्थिति तो चरमरायेगी ही, उसके साथ-साथ पर्यावरण प्रदूषण का संतुलन और अधिक बिगड़ जाएगा। मशीनीकरण के बढ़ने से बैलों की संख्या तो दिनों-दिन घट रही है, परंतु अभी भी बैल ग्रामीण रोजगार का अच्छा साधन है।

उत्तराखण्ड के पहाड़ी क्षेत्रों में बैलवाले एक जोड़ी हल-बैल से एक दिन में रू. १०० से १२५ प्रतिदिन आसानी से कमा लेते हैं। मैदानी तथा शहरी क्षेत्रों में बग्गी, बैलगाड़ी, हल आदि से एक व्यक्ति रू. १५० से २०० तक प्रतिदिन कमाता है। भले ही हम मशीनीकरण की तरफ बढ़ते जा रहे हैं परंतु बैल से मिलनेवाली कृषिशक्ति का महत्त्व कभी कम नहीं होगा।

(२) परिवहन : भारत में लगभग २५० लाख बैलगाड़ियाँ हैं, जिनमें से लगभग ७० प्रतिशत गाड़ियाँ बैलों द्वारा तथा ३० प्रतिशत भैंसों द्वारा खींची जाती हैं अर्थात् लगभग १७५ लाख गाड़ियों में बैल का प्रयोग किया जाता है।

यह मानने पर कि एक बैलगाड़ी एक वर्ष में मात्र २०० दिन प्रयोग होती है तथा प्रतिदिन १० क्विन्टल माल २५ कि. मी. तक ढोती है। इस हिसाब से एक गाड़ी एक वर्ष में लगभग ५००० टन माल एक कि. मी. तक ढोती है।

अतः मात्र बैलों से गाड़ियों द्वारा ८७,५००० लाख टन माल प्रतिवर्ष ढोया जाता है। इसकी ढुलाई मात्र रू. २.०० प्रति टन/कि. मी. मानने पर भी रू. १७,५०० करोड़ प्रतिवर्ष की आय होती है। एक अनुमान के अनुसार बैल द्वारा परिवहन से देश में ६० लाख टन पेट्रोलियम पदार्थों की बचत होती है जिसकी कीमत अरबों रूपये बैठती है।

इसके अतिरिक्त बैलगाड़ी द्वारा परिवहन से अन्य भी बहुत से लाभ हैं जैसे कि बैलगाड़ी से कच्चे तथा ग्रामीण रास्तों पर माल ढोया जाता है जहाँ ट्रक इत्यादि नहीं जा पाते। बैलगाड़ी से वातावरण किसी तरह प्रदूषित नहीं होता है। इन्हें बनाने तथा मरम्मत करने से गरीब ग्रामीणों को रोजगार मिलता है और इसकी तकनीक ग्रामीणों के पास उपलब्ध है। इसके लिए सरकार को न तो लम्बी-चौड़ी योजनाएँ बनानी हैं और न ही अधिक धन खर्च करना है। अतः बैल द्वारा परिवहन से ऊर्जा तो मिलती ही है, साथ ही वह अत्यंत सुलभ, सस्ती और प्रदूषणरहित भी है।

(३) ईंधन के रूप में : गाय के शुष्क गोबर का प्रयोग भारत के गाँव-गाँव में कंडे या उपलों के रूप में ईंधन के लिए किया जाता है। अनुमानों के आधार पर कुल गोबर का १/३ भाग खाद के रूप में तथा २/३ भाग ईंधन के रूप में किया जाता है। कुल गौवंशीय पशुओं से लगभग ११५०० लाख टन गोबर प्रतिवर्ष मिलता है, जिसमें ५० प्रतिशत शुष्क पदार्थ मानने पर ५,७५० लाख टन कंडे मिलते हैं। यदि एक परिवार की औसत दैनिक आवश्यकता १० किलोग्राम मान लें तो एक वर्ष में ३६ क्विन्टल कंडों की आवश्यकता होगी। (क्रमशः)

*

पूज्यश्री की अलौकिक शक्ति का अनुभव

बात जुलाई '९८ की है।

मेरी बहन को एकाएक चक्कर आया और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी। तुरंत उसे अस्पताल पहुँचाया गया। डॉक्टरों ने जाँच करके उसे 'सीरियस केस' घोषित करते हुए कहा :

''उसके मस्तिष्क में खून के थक्के जम गए हैं, जिसके कारण उसके शरीर के बाएँ हिस्से में लकवा मार गया है।''

फिर उसे इमरजेंसी वार्ड में भरती कर दिया। धीरे-धीरे मेरी बहन 'कोमा' में चली गई। डाक्टरों ने बताया कि ४८ घण्टे तक हम कुछ नहीं कह सकते। यह सुनते ही परिवार के होश उड़ गए। लेकिन तुरन्त मैंने श्रद्धा के साथ धैर्यपूर्वक गुरुमंत्र का जाप शुरू कर दिया। केवल ६ घण्टों के पश्चात् ही मेरी बहन को होश आ गया। जब मैं उसके पास गई तो वह खिड़की की ओर लगातार देखते ही जा रही थी। चूँकि उसकी जुबान में भी लकवा मार गया था इसलिए उसने धीरे-धीरे इशारे द्वारा मुझे बताया कि उसे खिड़की पर स्वयं परम पूजनीय, श्रद्धेय, भक्तवत्सल गुरुदेवजी लगातार कीर्तन करते हुए नजर आ रहे हैं। उसकी बात सुनकर मैं भी भावविभोर हो उठी तथा श्रद्धा से नतमस्तक हो गई।

तभी से उसकी हालत में सुधार होता गया। केवल चार दिन पश्चात् उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। जब आखिरी निरीक्षण के लिए डॉक्टर आए तो उन्होंने मुझसे पूछा : ''आप लोगों ने क्या कोई पूजा करवाई है ? हमारी जानकारी में तो पैरालीसिस (लकवा) का यह पहला केस है जो इतनी जल्दी ठीक होकर जा रहा है। यह तो एक चमत्कार ही है !''

जब मेरी बहन घर आ गई तथा कुछ-कुछ बोलना शुरू किया तो उसने बताया :

''जब तुम लोग मुझे अस्पताल ले जा रहे थे तब उस समय मुझे ऐसा लगा कि मेरा शरीर एक श्वेत कबूतर बन गया है जो कि उड़ने की तैयारी में है। उस समय मुझे अपने चारों ओर गहन सन्नाटे व उदासी का आभास हुआ और उसी वक्त मैं बेहोश हो गई। जब मुझे होश आया तो मैंने वही कबूतर पू. बापूजी के वक्षस्थल से चिपका हुआ देखा जिसे वे बड़े प्यार से धीरे-धीरे सहला रहे थे। मुझे बापूजी के साथ हरिनाम-कीर्तन की ध्वनि भी स्पष्ट सुनाई दे रही थी। पू. बापूजी मुझे भी साथ-साथ कीर्तन करने को कह रहे थे।''

चूँकि मेरी बहन कुछ भी बोलने में असमर्थ थी इसलिए उसने 'आऽऽऽ...' करके गाना शुरू कर दिया था जिसे सुनकर नर्स दौड़ी-दौड़ी उसके पास आ गई थी। तभी से धीरे-धीरे उसकी आवाज लौट आई।

जैसे ग्राह के बंधन से पीड़ित गज की प्रार्थना पर श्रीहरि दौड़े-दौड़े चले आए थे तथा उसे मुक्त करवाया था, ऐसे ही मेरी बहन को अकाल मृत्यु से छुड़ाने के लिए पूज्यश्री स्वयं साक्षात् उपस्थित हो गए। सच ही कहा है कि पू. बापूजी अपने भक्तों के प्रति हजार माताओं की करुणा रखते हैं।

ऐसे परमात्मस्वरूप श्री गुरुदेव को मेरा कोटि-कोटि नमन् !

- मधु शर्मा, दिल्ली।

*

सूक्ष्म में सहायता करते हैं गुरुदेव

अभी कुछ ही दिन पूर्व हिसार में पूज्य बापू के सत्संग का आयोजन हुआ। इतनी दूर जा पाना और वह भी कार्यदिवसों में लगभग असम्भव-सा लगा। इधर कुछ दिनों से सत्संग-स्वाध्याय के प्रति अरुचि जागृत हो रही थी। भीतर से यह आवाज आ रही थी कि गुरुदेव की दृष्टि ही इस अरुचिरूप मायाजाल को काट सकती है। अतः मन में दर्शनों की तड़प जगी।

रविवार के दिन पानीपत से एक सज्जन का फोन आया कि कार से हिसार सत्संग में जाने का प्रोग्राम है और सीट खाली है। बस, फिर क्या था ? पत्नी और बच्चे को साथ लिया और हिसार पहुँच गए सुबह दस बजे। पूज्य बापू के खूब दर्शन किए और सत्संग सुना। परन्तु पूज्य बापू की दृष्टि मुझ पर कैसे पड़े ? इतनी भीड़ में यह कैसे सम्भव है ?

पूज्य बापू अभी व्यासपीठ पर थे, अतः जल्दी-जल्दी आगे पहुँचा। जाते-जाते पूज्य बापू ने अपनी मीठी निगाहों से वह प्रसाद दिया कि सभी क्लेश दूर हो गए। मोह-माया के बन्धन कतर-कतर होकर छिन्न-भिन्न हो गए और आनन्द-ही-आनन्द छा गया। 'अरुचि' का नाश हुआ और सत्संग-स्वाध्याय में पुनः मन लगने लगा। सचमुच, गुरुदेव की महिमा अपार व अपरिमेय है।

- राजेन्द्र कुमार जोशी
अध्यक्ष, इतिहास विभाग,
गाँधी आदर्श महाविद्यालय, समालखा, जि. पानीपत।

शारीरिक, मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक ये सब पीड़ाएँ वेदान्त का अनुभव करने से तुरन्त दूर होती हैं। और... कोई आत्मनिष्ठ महापुरुष का संग मिल जाय तो वेदान्त का अनुभव करना कठिन कार्य नहीं है।

– वैद्यराज अमृतभाई

शीत ऋतु में उपयोगी पाक

शीतकाल में पाक का सेवन अत्यंत लाभदायक होता है। पाक के सेवन से रोगों को दूर करने में एवं शरीर में शक्ति लाने में मदद मिलती है। स्वादिष्ट एवं मधुर होने के कारण रोगी को भी पाक का सेवन करने में उबान नहीं आती।

पाक बनाने की सर्वसामान्य विधि : पाक में डाली जानेवाली काष्ठ-औषधियों एवं सुगंधित औषधियों का चूर्ण अलग-अलग करके उन्हें कपड़छन कर लेना चाहिए। किसमिस, बादाम, चारोली, खसखस, पिस्ता, अखरोट, नारियल जैसी वस्तुओं के चूर्ण को कपड़छन करने की जरूरत नहीं है। उन्हें तो थोड़ा-थोड़ा कूटकर ही पाक में मिला सकते हैं।

पाक में सर्वप्रथम काष्ठ औषधियाँ डालें, फिर सुगंधित पदार्थ डालें। अंत में केसर को घी में पीसकर डालें।

पाक तैयार होने पर उसे घी लगायी हुई थाली में फैलाकर बर्फी की तरह कई छोटे या बड़े टुकड़ों में काट दें। ठंडा होने पर स्वच्छ बर्तन या काँच की बरनी में भरकर रख लें।

पाक खाने के पश्चात् ऊपर से दूध अवश्य

पियें। इस दौरान मधुर रसवाला भोजन करें। पाक ज्यादा-से-ज्यादा ४० ग्राम जितनी मात्रा तक खाया जा सकता है।

(१) आर्द्रक पाक : अदरक के बारीक-बारीक टुकड़े, गाय का घी एवं गुड़- इन तीनों को समान मात्रा में लेकर लोहे की कड़ाही अथवा मिट्टी के बर्तन में धीमी आँच पर पकायें। पाक जब इतना गाढ़ा हो जाये कि चिपकने लगे तब आँच पर से उतारकर उसमें सोंठ, जीरा, कालीमिर्च, नागकेसर, जायफल, इलायची, दालचीनी, तेजपत्र, लेंडीपीपर, धनिया, स्याहजीरा, पीपरामूल एवं वायविडंग का चूर्ण ऊपर की औषधियों (अदरक आदि) से चौथाई भाग में डालें। इस पाक को घी लगे हुए बर्तन में भरकर रख लें।

शीतकाल में प्रतिदिन २० ग्राम की मात्रा में इस पाक को खाने से दमा, खाँसी, भ्रम, स्वरभंग, अरुचि, कर्ण रोग, नासिका रोग, मुख रोग, क्षय, उरःक्षत रोग, हृदय रोग, संग्रहणी, शूल, गुल्म एवं तृषा रोग में लाभ होता है।

(२) खजूर पाक : खारक ४८० ग्राम, गोंद ३२० ग्राम, मिश्री ३८० ग्राम, सोंठ ४० ग्राम, लेंडीपीपर २० ग्राम, कालीमिर्च ३० ग्राम तथा दालचीनी, तेजपत्र, चित्रक एवं इलायची १०-१० ग्राम लें। फिर विधि के अनुसार इन सब औषधियों से पाक तैयार करें।

यह पाक बल की वृद्धि करता है, बालकों को पुष्ट बनाता है तथा इसके सेवन से शरीर की कांति सुंदर होकर, धातु की वृद्धि होती है। साथ ही क्षय, कास, कंपवात, हिचकी, श्वास, खाँसी, प्रमेह एवं प्रदर का नाश होता है।

(३) बादाम पाक : बादाम ३२० ग्राम, मावा १६० ग्राम, बेदाना ४५ ग्राम, घी १६० ग्राम, मिश्री १६०० ग्राम तथा लौंग, जायफल, वंशलोचन एवं कमलगट्टा ५-५ ग्राम और एल्चा (बड़ी इलायची) एवं दालचीनी १०-१० ग्राम लें। इसके बाद विधि के अनुसार पाक तैयार करें।

नोट : इलायची अधिक प्रसिद्ध होने से उसकी आवश्यकता बढ़ गई है और एक किलो के दाम ७००-८०० रूपये तक हो गये हैं। बड़ी इलायची के गुणधर्म वही हैं जो छोटी इलायची के होते हैं ऐसा द्रव्य-गुण के विद्वानों का मानना है। अतः बड़ी इलायची भी छोटी इलायची के बराबर ही फायदा करेगी और बड़ी इलायची १०० रूपये में मिल जाती है अर्थात् छोटी इलायची के दाम के आठवें हिस्से में पड़ती है।

इस पाक के सेवन से वीर्यवृद्धि होकर शरीर पुष्ट होता है, वातरोग में लाभ होता है एवं बुखार से उठे हुए व्यक्ति में शक्ति आती है।

(४) मेथी पाक : मेथी एवं सोंठ ३२०-३२० ग्राम की मात्रा में लेकर दोनों का कपड़छन चूर्ण कर लें। ५ लिटर १२० मि.लि. दूध में ३२० ग्राम घी डालकर उसमें ये चूर्ण मिला दें। ये सब एकरस होकर गाढ़ा हो जाये, तब तक उसे पकायें। उसके पश्चात् उसमें २ किलो ५६० ग्राम शक्कर डालकर फिर से धीमी आँच पर पकायें। अच्छी तरह पाक तैयार हो जाने पर नीचे उतार लें। फिर उसमें लेंडीपीपर, सोंठ, पीपरामूल, चित्रक, अजवायन, जीरा, धनिया, कलौंजी, सौंफ, जायफल, दालचीनी, तेजपत्र एवं नागरमोथ... ये सभी ४०-४० ग्राम एवं कालीमिर्च का ६० ग्राम चूर्ण डालकर हिलाकर रख लें।

यह पाक ४० ग्राम की मात्रा में अथवा शक्ति अनुसार मात्रा में सुबह खायें।

यह पाक आमवात, अन्य वातरोग, विषय-ज्वर, पांडु रोग, पीलिया, उन्माद, अपस्मार, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरोरोग, नासिका रोग, नेत्र रोग, प्रदर रोग, सूतिका रोग आदि सभी में लाभदायक है। यह पाक शरीर के लिए पुष्टिकारक, बलकारक एवं वीर्यवर्धक है।

(५) सूंठी पाक : ३२० ग्राम सोंठ और १

कि. २८० ग्राम गुड़ को ३२० ग्राम घी एवं इससे चार गुने दूध में धीमी आँच पर पाक तैयार करें। गाढ़ा होने पर उतार लें। तत्पश्चात् घी लगी थाली में फैलाकर टुकड़े-टुकड़े काट लें एवं ठंडा होने पर बर्नी में भरकर रख लें।

इस पाक के सेवन से मस्तकशूल, वातरोग एवं कफरोगों में लाभ होता है।

*

मानसिक रोग एवं चिकित्सा

आज के अशांति एवं कोलाहल भरे वातावरण में दिन-प्रतिदिन मनुष्य का जीवन तनाव, चिंता एवं परेशानियों से ग्रस्त होता जा रहा है। इसी वजह से वह थोड़ी-थोड़ी बात पर चिढ़ने-कुढ़ने लगता है एवं क्रोधित हो जाता है। यहाँ क्रोध, अनिद्रा एवं अतिनिद्रा पर नियंत्रण पाने के लिए कुछ उपचार दिये जा रहे हैं :

* क्रोध की अधिकता में *

एक नग आँवले का मुरब्बा प्रतिदिन प्रातःकाल खायें और शाम को एक चम्मच गुलकंद खाकर ऊपर से दूध पी लें। इससे क्रोध पर नियंत्रण पाने में सहायता मिलेगी।

सहायक उपचार :

(१) भोजन २० से २५ मिनट तक चबा-चबाकर शांति से खायें।

(२) क्रोध आए उस वक्त अपना विकृत चेहरा आइने में देखने से भी लज्जावश क्रोध भाग जाएगा।

(३) **'ॐ शांति... शांति... शांति... ॐ...'** एक कटोरी में जल लेकर उस जल में देखकर इस मंत्र का २१ बार जप करके और बाद में वही जल पी लेने से क्रोधी स्वभाव में बदलाहट आएगी।

* अति नींद और सुस्ती आती हो तो *

पढ़ते समय नींद आती हो और सिर दुखता हो तो पान में एक लौंग डालकर चबा लेना चाहिए। इससे सुस्ती और सिरदर्द में कमी होगी। नींद अधिक नहीं सताएगी।

सहायक उपचार :

अति निद्रावालों के लिए वज्रासन का अभ्यास परमोपयोगी है। यह आसन मन की चंचलता दूर करने में भी सहायक है। पढ़ने में मन न लगनेवाले विद्यार्थियों को इस आसन में बैठकर पढ़ना चाहिए।

* अनिद्रा (नींद न आना) *

तरबूज के बीज की गिरी और सफेद खसखस अलग-अलग पीसकर समभाग मिलाकर रख लें। ३ ग्राम यह औषधि प्रातः एवं सायं लेने से रात में नींद अच्छी आती है और सिरदर्द ठीक होता है। आवश्यकतानुसार एक से तीन सप्ताह तक लें।

विकल्प : (१) ६ ग्राम खसखस २५० ग्राम पानी में पीसकर कपड़े से छान लें और उसमें २५ ग्राम मिश्री मिलाकर नित्य प्रातः सूर्योदय के बाद या सायं ४ बजे एक बार लें।

(२) ३ ग्राम पुदीने की पत्तियाँ (अथवा ढाई ग्राम सूखी पत्तियों का चूर्ण) २०० ग्राम पानी में दो मिनट उबालकर छान लें। गुनगुना रहने पर इस पुदीने की चाय में २ चम्मच शहद डालकर नित्य रात में सोते समय पीने से गहरी और मीठी नींद आती है। आवश्यकतानुसार ३-४ सप्ताह तक लें।

सहायक उपचार :

(१) नींद कम या देर से आती हो तो सोने से पहले पैरों को हल्के गर्म पानी से धोकर साफ कर लेना चाहिए।

(२) पैरों के तलवों में सरसों के तेल की मालिश करने से नींद गहरी आती है।

(३) सिर में बादाम रोगन या आँवला या ब्राह्मी तेल की मालिश करें।

(४) रात्रि को सोने से पहले सरसों का तेल गुनगुना करके उसकी ४-४ बूँदें दोनों कानों में डालकर ऊपर से साफ रूई लगाकर सोने से गहरी

नींद आती है।

(५) रात को निद्रा से पूर्व रूई का एक फाहा सरसों के तेल से तर करके नाभि पर रखने से और ऊपर से हल्की पट्टी बाँध लेने से लाभ होता है।

(६) सोते समय पाँव गर्म रखने से नींद अच्छी आती है, विशेषकर सर्दियों में।

(७) **ज्ञानमुद्रा** : हाथ के अँगूठे के पासवाली पहली अंगुली अर्थात् तर्जनी अंगुली तथा अंगूठे के अग्रभाग को परस्पर स्पर्श कराने पर (जोर से दबाने की जरूरत नहीं है) ज्ञानमुद्रा बनती है। अधिकांशतः दोनों हाथों से और अधिक-से-अधिक समय अर्थात् चलते-फिरते, बिस्तर पर लेटे हुए या कहीं बैठे हुए निरंतर इस मुद्रा का अभ्यास करना चाहिए। अनिद्रा के पुराने रोगी को ज्ञानमुद्रा के दो-तीन दिन के अभ्यास से ही ठीक किया जा सकता है।

नींद न आने के रोग के अतिरिक्त स्मरणशक्ति कमजोर होना, क्रोध, पागलपन, अत्यधिक आलस्य, चिड़चिड़ापन आदि मस्तिष्क के सम्पूर्ण विकार दूर करने, एकाग्रता बढ़ाने और स्नायुमंडल को शक्तिशाली बनाने के लिए भी **ज्ञानमुद्रा परम उपयोगी है।**

*

बकरे के चमड़े से बने हुए तबले को केवल थोड़े दिन सिंह के चमड़े के साथ रख दें तो तबले की आवाज में अंतर आ जाता है। जब मृत सिंह का चमड़ा बकरे के चमड़े से बने हुए तबले पर असर कर सकता है, तो बकरे जैसे मनवाले व्यक्ति को यदि वेदांतरूपी सिंह जैसे मनवाले पुरुष का संग मिल जाये तो उसका भी स्वभाव बदल सकता है।

पूज्यश्री ने मध्य प्रदेश के विभिन्न अंचलों के लाखों-लाखों लोगों के हृदय में ज्ञान-भक्ति-योग की वर्षा करके उन्हें उन्नत जीवन जीने की अनेक युक्तियाँ प्रदान कीं। उस सत्संग-गंगा में से कुछ आचमन यहाँ प्रस्तुत हैं :

रायपुर : दिनांक : ४ से ६ दिसम्बर तक रायपुर स्थित स्पोर्ट्स काम्प्लेक्स के विशाल प्रांगण में आयोजित गीता भागवत सत्संग समारोह में छत्तीसगढ़ क्षेत्र के विभिन्न अंचलों से बड़ी भारी संख्या में सत्संग-प्रेमियों का आगमन हुआ। 'धान का कटोरा' कहे जानेवाले इस क्षेत्र में गीता- भागवत सत्संग के दौरान ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापू ने कहा :

''जीवन में हमेशा तीन चीजों की प्रधानता रहनी चाहिए : विवेक, वैराग्य तथा विचार। विवेक की प्रधानता न रहने से व्यक्ति अपने उद्देश्य से भटक जाता है तथा गलत मार्ग पर चल पड़ता है। विवेक से काम करनेवाला व्यक्ति सदा उन्नति के पथ पर अग्रसर होता रहता है।''

भागवत, उपनिषद् व गीता के ज्ञान को अपने आचरण में लाने की प्रेरणा देते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''मनुष्य हाड़-माँस के शरीर को 'मैं' मानता है एवं भौतिक सुख और संपत्ति को 'मेरा' समझता है। इस 'मैं' और 'मेरेपन' की मान्यता को हटाने पर ही आत्मज्ञान संभव है। भौतिक संसार को सच्चा मानने के कारण ही सुख-दुःख की चोटें लगती हैं और शान्ति भंग होती है। फलस्वरूप जन्म-मरण के चक्रव्यूह

से जीव बेचारा मुक्त नहीं हो पाता।''

त्रिदिवसीय सत्संग समारोह के दौरान हजारों-हजारों लोगों ने पूज्यश्री को दक्षिणा के रूप में शराब, धूम्रपान, पान-पराग आदि व्यसनों का त्याग करने व उत्तम जीवन बनाने का वचन दिया। रायपुर नगर के अलावा बिलासपुर, भिलाई, धमतरी, भाटापारा, राजनांदगाँव, दुर्ग आदि क्षेत्रों से बड़ी संख्या में आये हुए जनसमुदाय ने आत्मा-परमात्मा को स्पर्श कर आनेवाली, अलख के औलिया की अमृतवाणी का लाभ उठाया।

बिलासपुर : यहाँ के व्यापार विहार में दिनांक : ७ से ९ दिसम्बर तक आयोजित 'गीता-ज्ञान अमृतवर्षा' में उपस्थित धर्मप्राण श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए योग-वेदान्त के मर्मज्ञ पूज्यपाद बापू ने कहा :

''तुम कितना भी धन पा लो, सौन्दर्य पा लो, सत्ता पा लो लेकिन अन्त में क्या रहेगा ? मौत के एक ही झटके में सब कुछ छूट जायेगा। अतः मौत सब छुड़ा ले इसके पहले, जहाँ मौत की दाल नहीं गलती उस परमात्मा में चित्त लगाओ। जिससे धन, सौन्दर्य और सत्ता मिलती है उस ईश्वर में चित्त लगाओ और उसी से प्रीति करो तो धन, सत्ता और व्यापार में भी सात्त्विक निखार आयेगा। यह शरीर मिट्टी में मिल जाये उससे पहले, तुम परमात्मा से मिल लो तो तुम्हारे सब दुःख समाप्त हो जायेंगे।''

आत्मा-परमात्मा से एकता स्थापित करने की कुंजियाँ बताते हुए योगनिष्ठ पूज्य बापू ने कहा :

''सावधान साधक ही परमात्मा से एकता का अनुभव कर सकता है।''

इस अंचल के विद्यार्थियों को तेजस्वी बनाने के लिए दूसरे दिन बच्चों के लाडले पूज्य बापू ने हजारों-हजारों विद्यार्थियों को शारीरिक और बौद्धिक विकास के अनेक प्रयोग सिखाये। सदैव प्रसन्न रहने की प्रेरणा देते हुए पूज्य बापू ने कहा :

जिन्दगी के बोझ को, हँसकर उठाना चाहिए।
राह की दुश्वारियों पर, मुस्कुराना चाहिए॥

अम्बिकापुर : दिनांक : ११ से १३ दिसम्बर तक सरगुजा अंचल में स्थित अम्बिकापुर में आयोजित गीता भागवत सत्संग समारोह के दौरान यहाँ के सरलस्वभाव धर्मप्रेमी जनता को अपने आत्मस्वरूप का स्मरण कराते हुए आत्मवेत्ता पूज्य बापू ने कहा :

''तुम्हारे भीतर इतना सामर्थ्य छुपा हुआ है कि जिसके आगे इन्द्र भी रंक जैसा है। यदि तुम अपने आत्मस्वरूप में डट जाओ तो बाकी सब तुम्हारी सेवा में सार्थक होने लगेगा। ब्रह्म-परमात्मा से एक बार पूर्ण एकता कर लो फिर विश्व का पूरा माल-खजाना तुम्हारा ही है। जो एक ईश्वर से ठीक तरह ईमानदारीपूर्वक चलकर ब्रह्म में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसके तरफ संसार की सारी वस्तुएँ आकर्षित होने लगती हैं। उसकी उपस्थिति मात्र से संसाररूपी बगीचा महक उठता है।''

आत्मशक्ति से ओत-प्रोत योग वेदान्त के अनुभवनिष्ठ ज्ञाता पूज्यश्री जिज्ञासु साधकों के समक्ष आत्मज्ञान की प्यालियाँ छलकाते हुए कह उठे :

जन्म-मृत्यु मेरे धर्म नहीं हैं।
पाप-पुण्य कुछ कर्म नहीं हैं॥

विशाल जनसमुदाय को जीवन जीने की कला सिखाते हुए पूज्यपाद बापू ने कहा :

''आलसी व्यक्ति का धन, यश, वैभव, ऐश्वर्य क्षीण हो जाता है। संसार मानव को अपना दास बना लेता है लेकिन जो भगवान का दास बन जाता है, संसार उसका दास बन जाता है।''

दूसरे दिन का दूसरा सत्र देश के भावी कर्णधार विद्यार्थियों के लिए था जिसमें हजारों-हजारों विद्यार्थियों के साथ सुविज्ञ शिक्षक बन्धुओं तथा उनके दूरदर्शी अभिभावकों ने भी मार्गदर्शन प्राप्त किया।

दमोह : सरगुजा क्षेत्र में पहली बार पधारे हुए ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापू तीन दिन तक अम्बिकापुर में ज्ञान-भक्ति की वर्षा करके एक विशेष हवाई

जहाज द्वारा दमोह पधारे जहाँ पर १५ से १७ दिसम्बर तक आयोजित गीता भागवत सत्संग समारोह के प्रथम दिन वहाँ के आदिवासियों द्वारा पारंपरिक वेशभूषा व लोकनृत्य से आपश्री का स्वागत किया गया। इन आदिवासियों में भारतीय संस्कृति की छवि निहारते हुए पूज्यश्री कह उठे :

''भले ही ये भौतिक रूप से गरीब हैं, बाहर से धन-वैभव नहीं है, पर दिल भारत की संस्कृति से रंगा हुआ है।''

दमोह के इतिहास में यह पहला अवसर था जिसमें आम आदमी से लेकर राजनेता, उद्योगपति, शासकीय कर्मचारी व अधिकारीगण सहित समाज के सभी वर्गों के लोगों ने एकजुट होकर इस दैवी आयोजन का लाभ लिया और आयोजक समिति ने इस प्रकार संत और समाज के बीच सेतु बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। विशाल परेड ग्राउन्ड में लाख आदमी बैठने की क्षमतावाला सभामंडप भी 'लघु' लगता था, मानो असमय ही कुम्भमेला लग गया हो। पंडाल व विशाल परेड ग्राउन्ड भर गया और लोग सड़कों पर बैठकर सत्संग सुनने लगे। बापूजी के आगमन को नगरवासियों द्वारा एक महान् उत्सव के रूप में मनाया गया। कटनी, जबलपुर, बालाघाट, मंडला आदि क्षेत्रों से आये हुए सत्संग-प्रेमियों के निवास की उत्तम व्यवस्था यहाँ की गयी थी। नगर के सभी स्कूलों, धर्मशालाओं व विश्रामगृहों के प्रबन्धकों ने भी दूर-दूर से आये हुए भक्तों की निःस्वार्थ सेवा की। संसार के त्रिताप से तप्त मानव में ज्ञान की पिपासा जगाते हुए योगनिष्ठ, कुण्डलिनी योग के समर्थ आचार्य पूज्य बापू ने कहा :

''यदि जंगल में आग लग जाये और तुम सरोवर के बीच आकर खड़े हो जाओ तो जंगल की आग तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। ऐसे ही राग-द्वेष, ईर्ष्या-घृणा, दुःख-संतापरूपी संसारी आग तुम्हें सताये तो तुम आत्मज्ञानरूपी सरोवर में आ जाओ।''

पाश्चात्य देशों के नैतिक पतन व भारत पर पड़नेवाले उसके कुप्रभाव से सावधान करते हुए प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य बापू ने कहा :

''जीव को अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं है इसीलिए वह बाह्य इन्द्रियजन्य सुखों के पीछे दीन-हीन जीवन बिता रहा है। अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान एक बार हो जाए तो मानव सभी बाह्य आकर्षणों और दुःखों से मुक्त हो जाय। वैदिक ज्ञान से परिपूर्ण लोग भौतिक सुख-सुविधाओं के अभाव में भी सुखी व आनन्दित रह सकते हैं। पाश्चात्य देशों में सुखी-से-सुखी कहा जानेवाला धनवान भी चिन्तित और बेचैन रहता है। चिन्ता, रोग व अनिद्रा जैसी बीमारियों से घिरा होना ही वहाँ के बड़े आदमी की पहचान है। कैसा दुर्भाग्यपूर्ण जीवन है ! पर यहाँ का गरीब आदमी भी चैन की नींद ले लेता है, बेचैनी के वातावरण में भी चैन से रह सकता है।''

भोपाल : गाँधीनगर में आध्यात्मिक स्पंदनों से युक्त संत श्री आसारामजी आश्रम में १८ से २० दिसम्बर तक तीन दिवसीय 'ध्यान योग शक्तिपात साधना शिविर' पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में संपन्न हुआ। भोपाल व दूर-दराज से आये हुए हजारों-हजारों साधकों ने अनुभवनिष्ठ महापुरुष के सान्निध्य में ध्यान, भक्तियोग और तत्त्वज्ञान का प्रयोगात्मक प्रसाद पाकर ऐसे अनुभव किये जिसका वर्णन लेखनी बेचारी क्या कर सकती है ! हर चेहरे पर मुस्कान और हर आँख में प्रभुप्रेम की प्यास देखते ही बनती थी। लोगों के हृदय में खूब प्रसन्नता व तृप्ति छलकी। ऐसे लोग बड़भागी हैं जो इस कलिकाल में योग व भक्ति का रस छलकानेवाले संत का सान्निध्य प्राप्त कर वर्षों की यात्रा पल में तय कर लेते हैं। ऐसे लोगों के लिए ही भगवान शिवजी ने कहा होगा माता पार्वती से :

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोद्भवः।
धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद् गुरुभक्तता ॥

'जिसके अंदर गुरुभक्ति हो उसकी माता

धन्य है, उसका पिता धन्य है, उसका वंश धन्य है, उसके वंश में जन्म लेनेवाले धन्य हैं, समग्र धरती माता धन्य है।'

ध्यान योग शिविर के व्यस्त समय में भी भोपाल स्थित केन्द्रीय जेल में वहाँ के अधिकारियों के विशेष अनुरोध पर प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य बापूजी कैदियों के बीच पहुँचे जहाँ दो हजार से भी अधिक कैदियों ने पूज्यश्री के समक्ष अपने आगे का जीवन सुधारने हेतु कटिबद्धता जाहिर की। सामाजिक जेल, नारकीय जेल और माता के गर्भरूपी जेल - ये तीन प्रकार का जेल बताते हुए पूज्यश्री ने कहा :

''इस जेल को तपस्थली बना दो ताकि नारकीय जेल व माता के गर्भरूपी जेल से मुक्त हो जाओ। जेल के एकान्तवास का लाभ उठाकर अपना समय प्रभु-भक्ति में लगाओ। जेल में जो काम करो तत्परता से करो, ईश्वर की पूजा समझकर करो। आज से यह पक्का निश्चय करो कि हम जेल में नहीं, तपस्यास्थली में हैं। जेल में रहकर भी आत्मकल्याण संभव है। मनमाना खान-पान, मनमानी भटकान और मनमाना संग रोकने की संयमस्थली जेल है।''

'नशे से सावधान', 'मन को सीख', 'यौवन सुरक्षा' आदि संयम व सज्जन जीवन बिताने की सीख देनेवाली पुस्तकें कैदियों के मध्य वितरित की गईं और सभी ने पाँच बार उन्हें पढ़ने का वचन दिया। उनके मन पर 'मुगला डाकू में से नेक नागरिक' प्रसंग का गहरा असर पड़ा। भीष्म पितामह, सदन व मुगले डाकू का प्रसंग सुनकर उनमें नेक नागरिक बनने का भाव दृढ़ हुआ और पूज्य बापू को नेक नागरिक बनने का वचन दिया। प्रसन्न रहना जिनका स्वभाव है ऐसे संतश्री ने कहा : **''...तो रखो मूँछ पर हाथ।''**

कैदियों के साथ आई. जी., न्यायाधीश, जेलर व अन्य सभी अधिकारीगण गद्‌गद् हो गये। बैंड-बाजों से पूज्यश्री का बहुत शानदार स्वागत किया गया। मालाओं से खूब भावभीना, खूब सराहनीय स्वागत हुआ।

धन्य हैं वे अधिकारी जो कैदियों का भविष्य उज्ज्वल करने के लिए संत और उनके बीच सेतु बनने में सफल हुए।

चान्डिल (जमशेदपुर) : यहाँ के आदिवासी व दरिद्रनारायणों के बीच विशाल भण्डारे का आयोजन किया गया जहाँ हजारों-हजारों गरीबों को अन्न-वस्त्र व दक्षिणा का वितरण किया गया। भण्डारा के दौरान हजारों लोगों ने शराब, बीड़ी, तम्बाकू आदि दुर्व्यसन छोड़ने का संकल्प किया। आदिवासियों की सेवा के लिए पूज्य बापू ने वहाँ की समिति को दस लाख रुपये देने की घोषणा की।

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
३० दिसम्बर '९८ से १ जनवरी '९९	भरूच	सत्संग समारोह प्रथम तीन सत्संग श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३ से ५	जे. पी. सायन्स ऐण्ड आर्ट्स कॉलेज ग्राउन्ड, रेलवे स्टेशन के पीछे।	(०२६४२) ४५६७८
६ से १० जनवरी '९९	पादरा (जि. वडोदरा)	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३ से ५	गोकुलधाम, सीताराम पार्क के सामने, सरदार पटेल मार्केट, ताजपुरा रोड, पादरा।	(०२६६२) २३०४३, २२८२५.
१४ से १७ जनवरी '९९ १८ से २०	अमदावाद आश्रम	उत्तरायण शिविर विद्यार्थी शिविर		संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-५.	[illegible]) ७५०५०१०, ७५०५०११.

पूर्णिमा दर्शन : १ जनवरी '९९. भरूच में।

युक्ति से मुक्ति

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

एक बार एक ब्राह्मण ने किसी बनिये को कुछ रकम देते हुए कहा : ''भैया ! यह रकम आप रखो । अभी मेरी बच्ची छोटी है । जब वह बड़ी होकर विवाह-योग्य हो जायेगी तब मैं ब्याजसहित आपसे यह रकम ले लूँगा। मुझे आप पर पूरा विश्वास है इसीलिए यह रकम मैं आपको दे रहा हूँ ।''

बनिये ने वह रकम रख ली ।

कुछ वर्षों के बाद जब ब्राह्मण की बच्ची विवाह-योग्य हो गयी, तब वह ब्राह्मण उस बनिये के पास अपने पैसे वापस लेने के लिए गया । ब्याज के कारण पैसे तो खूब बढ़ चुके थे लेकिन बनिये की नीयत भी बुरी हो गयी थी । अतः वह अनजान होकर बोला :

''आपने मेरे पास रुपये रखे थे ? नहीं नहीं, आप भूल रहे हैं भूदेव !''

यह सुनकर ब्राह्मण बड़ा उदास हो गया । और कोई चारा न दिखाई देने पर सहायता के लिए वह राजा के पास गया । ब्राह्मण ने जब सारी आपबीती राजा को सुनायी, तब राजा ने कहा :

''आपके पास कोई लिखित प्रमाण अथवा प्रत्यक्ष दर्शी गवाह तो कोई है नहीं । अतः बिना किसी प्रमाण के बनिये से रकम कैसे वसूला जा सकता है ?''

राजा का यह जवाब सुनकर ब्राह्मण और अधिक निराश हो गया और भगवान से न्याय की प्रार्थना करने लगा । सच्चे हृदय से की गयी प्रार्थना के प्रभाव से राजा के हृदय में एक युक्ति आ गयी । उसने ब्राह्मण से कहा :

''देखो ब्राह्मण ! एक काम करो । कल आप उस बनिये की दुकान के आस-पास खड़े रहना । कल मैं अपना जन्मदिन मनाने का नाटक करूँगा एवं शोभायात्रा निकालूँगा । बनिये की दुकान के पास खड़े देखकर आपको मैं आदरसहित अपने रथ पर बैठाऊँगा । शायद इस प्रयोग से बनिये की बुद्धि बदल जाये ।''

ब्राह्मण राजा की बात से कुछ आश्वस्त हुआ ।

दूसरे दिन राजा की सवारी निकली । ज्यों-ही राजा ने ब्राह्मण को बनिये की दुकान के पास खड़ा देखा, त्यों-ही वह बोल उठा :

''अरे ब्राह्मणदेवता ! आप पैदल जा रहे हैं ! आप तो मेरे गुरु हैं । आइए आइए...''

यह कहकर राजा ने उस ब्राह्मण को आदरपूर्वक अपने साथ रथ में बैठा लिया । यह देखकर बनिया चौंक उठा । वह भय के मारे पसीने से तरबतर हो गया । उसे हुआ कि 'इस ब्राह्मण का इतना प्रगाढ़ संबंध राजा के साथ है ! अगर मेरी बात राजा से कर देगा तो मेरी ता हालत पतली हो जायेगी । अब कुछ करना पड़ेगा ।' यह सोचकर उस बनिये ने अपने मुनीमों को आदेश दिया :

''जाँच करो कि यह ब्राह्मण कहाँ रहता है ।''

मुनीमों ने ब्राह्मण का घर ढूँढ़ निकाला एवं बनिये को उसका पता बता दिया ।

जो बनिया पैसे देने से इन्कार कर रहा था वही अब खुद ब्राह्मण के पास गया और बोला :

''हे भूदेव ! आपने आज से ११-१२ वर्ष पहले जो पैसे दिये थे वे आज बढ़कर २१,००० रुपये हो गये हैं और आपकी लड़की, मेरी भी तो लड़की है ! २१,००० रुपयों से क्या होता है ? अतः मेरे ४००० रुपये भी आप स्वीकार कर लें एवं पूरे २५,००० रुपये ले लें ।''

बनिये ने सोचा कि 'यदि इस ब्राह्मण से मेरा सीधा संबंध होगा तो राजा की रहमत मुझे भी मिलेगी । अगर यह नाराज हो जायेगा तो मुझे राजा के कोप का भाजन बनना पड़ेगा ।'

जब एक राजा से एक ब्राह्मण का संबंध जान लेने पर बनिये को झुकना पड़ता है तो यदि राजाओं के राजा परमात्मा के साथ आपका सीधा संबंध हो जाये तो फिर धरती के सारे बनिये, सारे अधिकारी आपकी दुआ लेकर अपना भाग्य बनाने के लिए आपके चरणों में नतमस्तक हों, इसमें क्या संदेह है... क्या आश्चर्य है ?

शब्दब्रह्म के खेल : 3 का उत्तर

न	म्र	ता	ॐ	भी	म	श	कु	र
व	ॐ	र	म	ल	ॐ	ॐ	ॐ	त
धा	र्मि	क	ॐ	ॐ	स	ना	त	न
भ	ॐ	ॐ	ॐ	स	म	ता	ॐ	भ
क्ति	ॐ	चि	ता	ॐ	दृ	ॐ	जा	गृ
ॐ	पि	त्त	ॐ	तु	ष्टि	ॐ	ल	ते
ॐ	पा	ॐ	ॐ	रि	ॐ	वि	ॐ	ॐ
ॐ	सा	र	मे	या	द	न	ॐ	प
ॐ	ॐ	त	ल	ॐ	क्ष	य	प	क्ष

जग में आये संत जन मुक्त करन को जीव। सब अज्ञान मिटाइ करि करत जीव ते शिव॥

म. प्र. की राजधानी भोपाल के सेन्ट्रल जेल में भी प्राणिमात्र के हितैषी संत पूज्य बापू ने कैदियों के लिए बहाई ज्ञान की गंगा।

सूरत आश्रम में कुंडलिनी योग के ज्ञाता पूज्य बापूजी के पावन सान्निध्य में ध्यान योग शिविर के भव्य शुभारंभ में उमड़ा जनसैलाब।

सद्गुरु महिमा को गाते चलो। चरणों में शीश झुकाते चलो॥

यो. वे. से. समिति, उमरसाडी (वलसाड) के भक्तों ने निकाली संकीर्तनयात्रा।